डॉ0 देवेन्द्र शर्मा

(संक्षिप्त जीवन वृत्त)

जन्म	:	28 जुलाई 1919
जन्म स्थान	:	लहरा, हाथरस (उत्तर प्रदेश)
पिता	:	पं0 तोताराम शर्मा
भ्राता	:	श्री पुरुषोत्तम शर्मा, डॉ0 अशोक शर्मा, श्री सोमेश्वर शर्मा
बहनें	:	डॉ0 गार्गी तिवारी, श्रीमती मैत्रेयी भारद्वाज
सहधर्मिणी	:	श्रीमती महिमा शर्मा
पुत्रियां	:	श्रीमती मधुलिका स्वामी, श्रीमती निवेदिता बुढलाकोटी
शिक्षा	:	प्रारम्भिक– वाराणसी, हाईस्कूल– हाथरस 1935, इंटर– कानपुर 1937 उच्च शिक्षा– म्योर सेंट्रल कालेज, इलाहाबाद बी.एससी. ऑनर्स– 1940, एम.एससी. – 1941
शोध	:	इलाहाबाद विश्वविद्यालय भौतिकी के प्रो0 के. मजूमदार के निर्देशन में प्रकाश स्पेक्ट्रमिकी विषय पर डी.फिल. डिग्री 1946
अध्यापन	:	1946–1958 12 वर्ष इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापक भौतिकी, 2 मई 1958 से 1976 तक 18 वर्ष विभागाध्यक्ष गोरखपुर विश्वविद्यालय कुलपति गोरखपुर विश्वविद्यालय 21 जून 1973 से 23 नवम्बर 1976 तक। कुलपति इन्दौर विश्वविद्यालय सितम्बर 1978 से सितम्बर 1982 तक।
शोध निर्देशन	:	29 शोध छात्रों को पी.एचडी. उपाधि का, 50 शोधपत्र प्रकाशित,
विशिष्ट विषय	:	स्पेक्ट्रोस्कोपी, ऐस्ट्रोफिजिक्स, सालिड स्टेट फिजिक्स हिन्दी के प्रति रुचि : 1942 से ही सम्पादक 'विज्ञान' (मासिक) 1956 से 1959
सम्प्रति	:	अवकाश प्राप्त (1982 से स्वाध्याय में रत)
स्थायी पता	:	सी 1038, इन्दिरा नगर, लखनऊ–16
सम्मान	:	1949 फेलो नेशनल एकेडमी आफ साइंसेज 1954 शिक्षा मंत्री मेडल 1976 द्वितीय विश्व सम्मेलन मारीशस में भारत के प्रतिनिधि 1983–84 उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का संस्थान सम्मान 1997 'विज्ञान भास्कर' विज्ञान परिषद् प्रयाग 2000 डी.एससी. मानद उपाधिः बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय 2000 'विज्ञान भूषण' हिन्दी संस्थान, उत्तर प्रदेश 31.1.2002 को गोरखपुर विश्वविद्यालय में 'डॉ0 देवेन्द्र शर्मा सेंटर फार एस्ट्रोफिजिकल स्टडीज' का शिलान्यास।

विज्ञान

परिषद् की स्थापना 10 मार्च 1913
वर्ष 88 अंक 4

विज्ञान का प्रकाशन अप्रैल 1915
जुलाई 2002

सभापति
डॉ० (श्रीमती) मंजु शर्मा

सम्पादक एवं प्रकाशक
डॉ० शिवगोपाल मिश्र
प्रधानमंत्री, विज्ञान परिषद् प्रयाग

सम्पर्क
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद–211002
फोन : 460001 ई–मेल : vigyan1@sancharnet.in वेबसाइट : www.webvigyan.com

विषय सूची

डा. मुरली मनोहर जोशी
DR. MURLI MANOHAR JOSHI

मानव संसाधन विकास मंत्री
भारत
नई दिल्ली - ११० ००१
MINISTER OF
HUMAN RESOURCE DEVELOPMENT
INDIA
NEW DELHI-110 001

संदेश

यह हर्ष का विषय है कि विज्ञान परिषद प्रयाग ने 'विज्ञान' मासिक पत्रिका के पूर्व सम्पादक, प्रख्यात भौतिक विज्ञानी तथा मेरे गुरु आदरणीय डॉ0 देवेन्द्र शर्मा के सम्मान में 'विज्ञान' मासिक का विशेषांक प्रकाशित करने का निर्णय किया है।
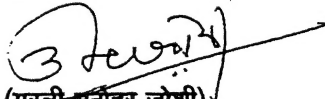
मुझे डॉ0 शर्मा जी के सम्पर्क में आने का अवसर 1950 के दशक में उस समय प्राप्त हुआ जब मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में स्नातकोत्तर कक्षा में प्रवेश लिया। एम.एससी. करने के पश्चात मैंने अपना शोधकार्य, जो द्विपरमाणुक अणुओं के उत्सर्जन तथा अवशोषण स्पेक्ट्रम से संबंधित था, डॉ0 शर्मा के ही निर्देशन में प्रारम्भ किया। इसी के बाद डॉ0 शर्मा गोरखपुर विश्वविद्यालय चले गए और मुझे अपना शोध-निबन्ध पूरा करने के लिए गोरखपुर जाकर उनसे मार्गदर्शन लेना पड़ता था। मैं चाहता था कि डॉ0 शर्मा शीघ्रातिशीघ्र मेरे द्वारा लिखे हुए अंशों को सुधार कर मुझे मुक्त कर दें क्योंकि मुझे अपनी शैक्षणिक और सामाजिक व्यस्तताओं के कारण इलाहाबाद लौटने की जल्दी रहती थी किन्तु डॉ0 शर्मा जब तक शोध-निबन्ध के प्रत्येक बिन्दु से सन्तुष्ट नहीं हो जाते थे तब तक वे उसमें सुधार करते रहते थे और मुझे भी मजबूर होकर अपने प्रवास की अवधि बढ़ानी पड़ती थी। डॉ0 शर्मा प्रत्येक कार्य को परिशुद्धता और समग्रता से करने वालों में थे तथा यही अपेक्षा वे अपने छात्रों से भी करते थे। डॉ0 शर्मा के निर्देशन में 1958 में डी0फिल0 करने वाला मैं प्रथम छात्र बना।

डॉ0 शर्मा 1955 से 1958 तक 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक रहे और उनके सम्पादक काल में पत्रिका के स्वरूप में डॉ0 शर्मा के व्यक्तित्व की छाप स्पष्ट झलकती थी। डॉ0 शर्मा के हिन्दी भाषा प्रेम से प्रेरणा ग्रहण कर मैंने भी हिन्दी भाषा में शोध पत्र लिखे जो विज्ञान परिषद द्वारा विज्ञान परिषद अनुसंधान पत्रिका में प्रकाशित किए गए।

डॉ0 शर्मा ने एक शिक्षक, वैज्ञानिक, शोधकर्त्ता और प्रशासक के रूप में अपने दीर्घ कार्यकाल में आदर्शों, कर्त्तव्यनिष्ठा और अनुशासन के जो मानदण्ड स्थापित किए वे प्रत्येक के लिए प्रेरणास्रोत हैं। जीवन के नवें दशक में भी उनकी ऊर्जा, सक्रियता तथा कार्यशीलता युवकों से स्पर्धा करती प्रतीत होती है।

मैं विज्ञान परिषद को पुनः इस हेतु साधुवाद देता हूँ कि परिषद अपने पूर्व सम्पादक के सम्मान में यह विशेषांक प्रकाशित कर रही है। परिषद का नौ दशकों का इतिहास हिन्दी और विज्ञान की सेवा का इतिहास रहा है। पूर्व में भी परिषद ने अनेक हिन्दी विज्ञान सेवियों का सम्मान किया है। नई पीढ़ी को यह ज्ञान होना आवश्यक है कि पूर्व के व्यक्तियों ने किस प्रकार और किन संघर्षों से गुजरते हुए प्रगति की है और संस्था को वर्तमान स्वरूप दिया है। यह सम्मान अंक इस दिशा में एक सराहनीय प्रयास है।

मैं डॉ0 शर्मा जी के प्रति प्रणाम निवेदन करते हुए उनके तथा उनके परिवार के प्रति अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ तथा पत्रिका के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

(मुरली मनोहर जोशी)

आचार्य डॉक्टर देवेन्द्र शर्मा जी

डॉ० एस०के० जोशी

माननीय मिश्र जी,

मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप मेरे गुरु प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा जी के सम्मान में 'विज्ञान' का विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं। यह प्रयास सराहनीय और प्रशंसनीय है। मुझे विश्वास है कि यह अंक हमारे युवकों को प्रोत्साहित करेगा। प्रो० देवेन्द्र शर्मा के पदचिन्हों में विशेषकर– परिश्रमी, आडम्बरहीन तथा शालीन चरित्रधारी बनने के लिए।

प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा जी से मेरा सर्वप्रथम परिचय एक विद्यार्थी के रूप में प्रयाग विश्वविद्यालय में 1956 में एम.एससी. में 'जनरल प्रोपर्टीज ऑफ मैटर' विषय पढ़ते हुए हुआ। उन्होंने उस नीरस विषय को बहुत सुन्दर ढंग से पढ़ाया। पदार्थ के गुणों का विश्लेषण उसकी परमाणु संरचना के आधार पर करना मैंने प्रोफेसर शर्मा की कक्षा में ही सीखा। उस समय की पुस्तकों में इस प्रकार का दृष्टिकोण उपलब्ध नहीं था।

1957 में एम.एससी. उत्तीर्ण होते ही भौतिकी विभाग प्रयाग विश्वविद्यालय में लेक्चरर के पद पर मेरी नियुक्ति हो गई और तभी प्रोफेसर शर्मा गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी विभाग के संस्थापक प्रोफेसर और विभागाध्यक्ष बनकर चले गए। उन्होंने गोरखपुर में एक प्रगतिशील भौतिकी विभाग की स्थापना की। उनका सरल व्यक्तित्व तथा निष्पक्ष व्यवहार, उनकी सहानुभूति, उनकी हर सहयोगी की समस्या को अपनी समस्या समझने की प्रवृत्ति ने उन्हें आदृत तथा लोकप्रिय बनाया। वह 1973 से 1976 तक गोरखपुर विश्वविद्यालय के एक सफल कुलपति बने। उनकी यह सफलता उनकी इन्दौर विश्वविद्यालय में कुलपति बनने का भी कारण बनी।

प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा के सरल व्यक्तित्व ने मुझे जीवन में आडम्बरों से दूर रहने की प्रेरणा दी। वह अपनी बात को संक्षेप में स्पष्ट रूप से तथा मीठी वाणी में कहते हैं। अपने सहकर्मियों पर वह अपने व्यक्तित्व की छाप छोड़ते हैं और उनकी सेवानिवृत्ति के बाद भी लोग उनका उतना ही आदर करते हैं जितना उनके सेवाकाल में। यही कारण है कि 31 जनवरी 2002 को गोरखपुर विश्वविद्यालय में 'देवेन्द्र शर्मा ज्योतिर्विज्ञान अध्ययन केन्द्र' का शिलान्यास हुआ। यह केन्द्र गोरखपुर में भौतिकी में उत्कृष्ट शोध तथा अध्ययन केन्द्र बन कर प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा के आदर्शों को एक मूर्तरूप देगा।

यह मेरा सौभाग्य है कि मैं प्रोफेसर शर्मा का शिष्य हूँ और मुझे आज भी उनका स्नेह प्राप्त है।

पूर्व निदेशक
नेशनल फिजिकल लैबोरेटरी
डॉ. के.एस. कृष्णन रोड
नई दिल्ली

पूज्य डॉ० शर्मा जी

डॉ० शिवगोपाल मिश्र

83 वर्षीय डॉ0 शर्मा आज भी मेरी प्रेरणा के स्रोत हैं। मुझे वर्ष 1957 की याद आती है जब सर्वप्रथम उनका एक पत्र मुझे इस आशय का मिला था कि उन्होंने 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक मण्डल में मेरा नाम सम्मिलित कर लिया है और मुझे विज्ञान परिषद् में उनसे मिलना है। मुझे स्मरण है कि मेरे समान ही भौतिकी विभाग के मेरे सहपाठी डॉ0 यतीन्द्र पाल वार्ष्णेय का भी नाम था। हम लोगों से डॉ0 शर्मा ने बहुत ही मधुरवाणी में बातें कीं, हमारे उत्तरदायित्वों को बताया और 'विज्ञान' में लिखने के लिए कहा।

मुझे आज भी यह पता नहीं चल पाया कि वे पत्रिका का सम्पादन किस तरह करते थे– हां, पत्रिका के प्रूफ रसायन विभाग के लैब सहायक श्री जटाशंकर द्विवेदी देखते थे। डॉ0 शर्मा के सम्पादकीय पढ़कर ही सन्तोष करना पड़ता था। इसके पूर्व पत्रिका के सम्पादक डॉ0 हीरालाल निगम थे। वे मेरे गुरु थे। उनके आदेश पर मैं 'विज्ञान' के लिए एक लेख का हिन्दी अनुवाद कर चुका था। डॉ0 निगम ने विज्ञान का कार्य श्री जगपति चतुर्वेदी को सौंप रखा था और वे रसायन विभाग में ही दिख जाते थे क्योंकि अभी परिषद् का नया भवन बन रहा था।

डॉ0 शर्मा को शीघ्र ही विभागाध्यक्ष बनकर गोरखपुर यूनिवर्सिटी जाना पड़ा। मैं उनके विदाई समारोह में गया था। तब उनको सपत्नीक देखा था। आकर्षक व्यक्तित्व था। उनकी वाणी तो मधुर थी ही। उसके बाद डॉ0 शर्मा से भेंट नहीं हुई। उनके छोटे भाई डॉ0 अशोक शर्मा यदा कदा 'विज्ञान' में लेख लिखते, परिषद् भी आते रहते थे, उन्हीं से डॉ0 शर्मा के विषय में पता चलता रहता। स्वामी सत्यप्रकाश जी बताया करते थे कि डॉ0 देवेन्द्र शर्मा के पिता तोताराम शर्मा हिन्दी के पुजारी थे।

जब शर्मा जी को 'विज्ञान भूषण' सम्मान मिला तो मैं उनके लखनऊ निवास पर परिषद् की ओर से बधाई देने गया। परिषद् ने शर्मा जी को 'विज्ञान वाचस्पति' सम्मान से पहले ही अलंकृत किया था।

मेरा उनसे पत्र व्यवहार उनके लखनऊ जाने पर हुआ। बनारस विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में डॉ0 नन्दलाल स्मृति व्याख्यानमाला के प्रथम व्याख्यान का आयोजन होना था। व्याख्यान देने के लिए डॉ0 शर्मा का नाम चुना गया था। डॉ0 शर्मा ने व्याख्यान देना सहर्ष स्वीकार किया। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में उनके दर्शन हुए। फिर तो काफी आत्मीयता हो गई। जब जब मैं लखनऊ जाता, उनके आवास पर मिलने अवश्य जाता। उनसे परिषद् के विषय में, अनुसन्धान पत्रिका के विषय में चर्चाएं होतीं।

हमने जब जब उन्हें परिषद् में व्याख्यान देने के लिए बुलाया तो वे उसमें आए। फिर वे राष्ट्रीय संगोष्ठी में मुख्य अतिथि बन कर आए। 16 दिसम्बर 2001 को मैं उनसे मिला– इच्छा प्रकट की कि आपके सम्मान में विज्ञान का अंक निकालना चाहते हैं। आपने सहमति दे दी। यह अंक अब आपके हाथों में है।

प्रधानमंत्री
विज्ञान परिषद् प्रयाग

प्रो० देवेन्द्र शर्मा : एक सन्त विज्ञानी

डॉ० अजितराम वर्मा

विज्ञान परिषद् प्रयाग की ओर से 'विज्ञान भूषण' डॉक्टर देवेन्द्र शर्मा के सम्मान में 'विज्ञान' पत्रिका का एक विशेषांक प्रकाशित करने का निश्चय किया गया है। यह हर्ष की बात है। वैज्ञानिक समुदाय को अपने एक वरिष्ठ विज्ञानी को सम्मानित करने के लिए सीमित तरीके ही उपलब्ध हैं। शहर की सड़कों के नाम, इमारतों के नाम, मुहल्लों के नाम आदि विज्ञानी के नाम पर रखना हमारे हाथ में नहीं है। परन्तु विज्ञानी के सम्मान में एक गोष्ठी का आयोजन करना, या पत्रिका का विशेषांक निकालना या समर्पित करना, हमारे हाथ में है। अतएव मैं इस निश्चय का एवं प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा के विषय में एक आलेख लिखने के अवसर का स्वागत करता हूँ।

डॉक्टर देवेन्द्र शर्मा से मेरा सम्पर्क 60 वर्ष से अधिक पहले, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में हुआ। वे मुझसे एक वर्ष सीनियर हैं। हम प्रोफेसर पी.सी. बनर्जी छात्रावास में रहते थे। वहाँ हमारे साथ प्रोफेसर राम चरण मेहरोत्रा भी थे। वे मुझसे एक साल जूनियर हैं। छात्रावास के अध्यक्ष प्रसिद्ध गणितज्ञ प्रोफेसर बी.एन. प्रसाद थे। 1942 में जब मैंने एम.एससी. पास किया ता छात्रावास के अधिकारियों ने एक नया नियम बनाया कि एम.ए. /एम.एससी. के बाद विद्यार्थियों को छात्रावास में रहने की सुविधा न दी जाए क्योंकि छात्रावास में कमरों की कमी थी। कमरे बी.ए./बी.एससी. के नए विद्यार्थियों को दिए जाएँ क्योंकि वे शहर में नए आए हैं। अतएव हम दोनों ने एक मकान किराए पर लिया। यह मकान 719, यूनिवर्सिटी रोड, म्योर होस्टल (उस समय का नाम) के फाटक के सामने था। वहाँ पर शर्मा, अवध बिहारी भाटिया और मैं साथ रहते थे। बाद में श्रीमती शर्मा जी उसी छोटे से मकान में आ गईं। हम सब एक परिवार की तरह रहते थे।

मुझे याद है कि प्रसिद्ध विज्ञानी प्रोफेसर असुन्दी, जब इलाहाबाद आते, तब हम लोगों के साथ इसी मकान में ठहरा करते थे। वे गंगा स्नान के लिए पैदल त्रिवेणी जाते और सूर्योदय तक वापस लौट आते थे। हम तीनों प्रोफेसर के.एस. कृष्णन के साथ रिसर्च करते थे। समय बीतने पर अवध बिहारी भाटिया विदेश चले गए और अन्त में कनाडा में बस गए जहाँ उन्होंने बहुत ख्याति पाई। मैं 1947 में दिल्ली आ गया जहाँ यूनिवर्सिटी के भौतिक विभाग में मेरी नियुक्ति हो गई। वे 4–5 वर्ष जो हम लोगों ने साथ बिताए सदैव याद रहेंगे।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में रिसर्च

इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भौतिक विभाग में तीन डिवीजन मुख्य थे। स्पेक्ट्रोस्कोपी (Spectroscopy) डिवीजन जिसके प्रमुख थे डॉक्टर के. मजूमदार, वायरलेस डिवीजन (Wireless Division) जिसके प्रमुख थे डॉक्टर जी.आर. तोशनीवाल तथा एक्सरे (X-ray) डिवीजन जिसमें डॉक्टर जी.बी. देवधर प्रमुख थे। इसी समय Indian Association for Cultivation of Science, Calcutta से प्रोफेसर के.एस. कृष्णन को भौतिक विभाग के अध्यक्ष के रूप में आने के लिए आमंत्रित किया गया जिसका कार्यभार उन्होंने 1942 में संभाला। 1938 तक इस विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर एम.एन. साहा थे। उनके जाने के बाद 1942 तक यह जिम्मेदारी प्रोफेसर सालिगराम भार्गव ने सम्भाली थी।

हम लोग स्पेक्ट्रोस्कोपी डिवीजन में काम करते थे। इस डिवीजन में कई अच्छे अच्छे उपकरण उपलब्ध थे। उनमें से एक उल्लेखनीय उपकरण था किंग की भट्टी (King's Furnace)। यह जर्मनी की मशहूर क्रुप्स फैक्ट्री द्वारा विशेष रूप से भौतिक विभाग के लिए बनाई गई थी। यह कहा जाता था कि रायल सोसाइटी आफ लन्दन (Royal Society of London) द्वारा रु० 4,000/– का अनुदान प्रो० साहा को अपने सिद्धांत पर प्रयोग करने के लिए दिया गया था। यह भट्टी उसी अनुदान के पैसों से खरीदी गई थी। इस भट्टी के कक्ष को निर्वात पम्प द्वारा निम्न दाब तक निर्वात किया जा सकता था या इच्छानुसार इसमें कोई गैस (जैसे नाइट्रोजन) उपयुक्त दाब पर भरी जा सकती थी। यह ग्रेफाइट भट्टी थी जिसमें ग्रेफाइट की ट्यूब को प्रबल विद्युत धारा प्रवाहित करके 1500–3000K तक का ताप प्राप्त किया जा सकता था। इन ग्रेफाइट ट्यूबों का निर्माण विभाग की कार्यशाला में किया जाता था।

इस भट्टी का स्पेक्ट्रोस्कोपी के रिसर्च में उपयोग करने वालों में डॉ० देवेन्द्र शर्मा अग्रणी थे। उन दिनों द्विपरमाणु अणु (Diatomic molecules) पर काफी काम हो रहा था। यह डॉ० शर्मा की सूझबूझ थी कि ग्रेफाइट ट्यूब के भीतर ऐसे अणुओं का संश्लेषण तैयार किया जाए जिनके लिए उच्च ताप (1500-3000K) की आवश्यकता होती है। उन्होंने इस भट्टी से एक स्पेक्ट्रोग्राफ को जोड़ दिया और कई नए अणुओं के स्पेक्ट्रम का अध्ययन किया। डॉ० शर्मा और उनके सहयोगियों ने अवशोषण स्पेक्ट्रम (Absorption spectrum) तथा उत्सर्जन स्पेक्ट्रम (Emission Spectrum) दोनों का अध्ययन किया। जिन अणुओं का अवशोषण स्पेक्ट्रम अध्ययन किया गया उनमें प्रमुख थे SiO, SnO, SnS, SnSe, SnTe, PbSe, PbTe, TeSe। ये सब अणु प्राकृतिक रूप से उपलब्ध नहीं हैं। इन अणुओं के विचित्र भौतिक गुण हैं जिसका अध्ययन एक अलग ही विषय है। यह गर्व की बात है कि इन द्विपरमाणु अणुओं के अध्ययन का उल्लेख उस समय की सभी प्रसिद्ध और मानक पुस्तकों में किया गया है। इसके अलावा CuTe, AuTe के उत्सर्जन स्पेक्ट्रम का भी अध्ययन किया गया। बाद में ऐसे अणुओं का अध्ययन किया गया जिनका महत्व खगोल भौतिकी (Astrophysics) के सम्बन्ध में है। AlCl, तथा AlBr का एक विशेष अध्ययन HCN और DCN अणुओं का अवरक्त स्पेक्ट्रम में किया गया। इसके लिए 600 मीटर लम्बे पथ की आवश्यकता हुई। डॉ० शर्मा और सहयोगियों ने कई बेन्ज़ीन व्युत्पन्नों (Benzene derivatives) के अवशोषण स्पेक्ट्रमों का अध्ययन किया।

गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिक विभाग का कार्यभार

मई 1958 में डॉ० शर्मा को गोरखपुर विश्वविद्यालय के नवस्थापित भौतिक विभाग के अध्यक्ष का कार्यभार सौंपा गया। इस नए विभाग में बी. एससी. तथा एम.एससी. की पढ़ाई की योजना बनाई गई। इसके लिए अध्यापकों के अलावा उचित प्रयोगशाला और उपकरणों की आवश्यकता होती है। जुलाई के मध्य में गर्मियों की छुट्टियों के बाद, विश्वविद्यालय के खुलने का समय आने वाला था। केवल ढाई महीने का समय था। इसी थोड़े समय में सब प्रबन्ध करना था। डॉ० शर्मा ने पूरी दौड़धूप की। बहुत कुछ उपकरण तो विभाग की कार्यशाला में बनाए गए और कुछ के लिए स्थानीय प्रबन्ध किया गया। यह डॉ० शर्मा के परिश्रम का नतीजा था कि जुलाई से यथापूर्वक पढ़ाई शुरू कर दी गई। एम.एससी. के विद्यार्थियों को इलेक्ट्रानिक्स, स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्सरे विशिष्ट विषय उपलब्ध कराए गए। अगले दस वर्षों में विकास जारी रहा और खगोल भौतिकी, ठोस अवस्था भौतिकी (Solid State Physics) और आणविक भौतिकी (Mollecular Physics) भी विशिष्ट विषय के रूप में उपलब्ध कराये गये। बायोफिजिक्स एक उभरता हुआ विषय था। उस विषय में भी पढ़ाई और रिसर्च पर ध्यान दिया गया। संदीप्ति (Luminescence) एक रोचक विषय है। विभिन्न Phosphors के Thermoluminescence तथा electroluminescence का अध्ययन शुरू किया गया। डॉ० शर्मा को खगोल भौतिकी में रुचि रही है और

खगोल भौतिकी में काफी रिसर्च की है— विशेष रूप से स्पेक्ट्रोस्कोपी के माध्यम से। इस समय गोरखपुर में एक खगोल भौतिकी के अध्ययन का केन्द्र (Centre for Astrophysical Studies) स्थापित करने की योजना बनाई जा रही है। इन सबका श्रेय प्रो0 शर्मा को है।

कुशल प्रशासक

प्रो0 शर्मा एक विद्वान विज्ञानी तो हैं ही। पर वे एक कुशल प्रशासक भी हैं। उन्होंने गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति के पद को भी सुशोभित किया है। इसके बाद वे इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। दोनों स्थानों पर उन्होंने अध्ययन और रिसर्च के साथ ही स्वच्छ प्रशासन, पारदर्शिता और ईमानदारी पर विशेष ध्यान दिया। अपनी कार्यशैली के कारण अध्यापकों, विद्यार्थियों और प्रशासन से जुड़े सभी लोगों पर उन्होंने छाप छोड़ी है। उन्होंने अपने कार्यकाल सफलतापूर्वक पूरे किए।

मनीषी विद्वान, चिन्तक एवं सन्त पुरुष

डॉ0 शर्मा एक विद्वान पुरुष हैं जिनकी रुचि पढ़ने, पढ़ाने में सदैव रही है। उनका सारा जीवन विश्वविद्यालय की गतिविधियों से जुड़ा रहा है। वे अभी भी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की कार्य परिषद् के सदस्य हैं। स्वास्थ्य को देखते हुए वे वैज्ञानिक गोष्ठियों में भाग लेते हैं और व्याख्यान देते हैं। उनके विचारों को सब लोग बड़े आदरपूर्वक सुनते हैं। उनके सम्पर्क में जो भी आया, उनके सरल और सादे स्वभाव से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा। वे एक विद्वान और सन्त पुरुष हैं। उनका पारिवारिक जीवन सादा और सुखमय है। मैं भलीभांति जानता हूँ कि इस तरह का सच्चा जीवन निभाने में श्रीमती महिमा शर्मा का बहुत बड़ा योगदान रहा है। डॉ0 शर्मा के व्यक्तित्व को वर्तमान उच्च स्तर तक पहुँचाने में उनका हाथ रहा है। डॉ0 शर्मा के सम्मान में वे भी भागीदार हैं। डॉ0 शर्मा का हिन्दी से विशेष लगाव रहा है अतएव यह विशेषांक निकालना बिल्कुल उचित है। मैं इस आलेख लिखने के अवसर का स्वागत करता हूँ और इसके द्वारा अनेक शुभकामनाएँ देना चाहता हूँ।

ए-160, दीपाली कॉलोनी
पीथमपुरा, दिल्ली-34

डॉ० देवेन्द्र शर्मा

प्रो० जी०जी० सनवाल

मेरा आन्तरिक सम्पर्क प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा जी से सन् 1990 में हुआ जब उन्होंने सी.पी.एम.टी. परीक्षा के भौतिक विज्ञान प्रश्नपत्रों का माडरेशन तथा माडरेशन समिति के कोआर्डिनेटर के रूप में कार्य किया। उनकी कार्यकुशलता व सहज भाव से मैं बहुत प्रभावित हुआ। मुझको इस सम्बन्ध में बार बार उनके घर जाना पड़ता था। वह आदरपूर्वक बैठाकर समस्याओं का अपनत्व के साथ हल बतलाते थे। तीन बार विश्वविद्यालयों के कुलपति रहने के बाद भी उन्हें इसका कभी अभिमान न था। शर्मा जी के जितने गुण हैं बहुत कम लोगों में उतने गुण होते हैं। वह सात्त्विकी हैं और मृदुभाषी, सदाशयी, सर्वोपकारी, सरल स्वभाव, अहंकार रहित तथा ज्ञान के धनी हैं। मैं ऐसे श्रद्धामय पुरुष के दीर्घायु तथा सुखी जीवन की कामना करता हूं।

पूर्व प्रो वाइस चांसलर
लखनऊ विश्वविद्यालय

आचार्य डॉक्टर देवेन्द्र शर्मा जी

डॉ० राम चरण मेहरोत्रा

देवेन्द्र ! तुम ईश नहीं केवल देवों के,
पथ–प्रदर्शक तुम हो मानव के भी ।
स्फटिक शिला सी मूर्ति तुम्हारी,
दर्पण है मन की स्वच्छता का।
कर्मठ रहे सदैव पठन पाठन में,
स्पेक्ट्रोस्कोपी की उच्च विशिष्टता,
औरों की पदचिन्ह बनी।
देश–विदेश में खोज के प्रति निष्ठा,
गुरु गौरव उच्चतम पद के अधिकारी
चाहे रहे अध्यापक या कुलपति
सौम्य रहे सभी स्थलों पर।
कभी न चुका पाएगा तुम्हारा यह ऋण
कोई भी सरस्वती का मन्दिर।
देवेन्द्र तुम ईश नहीं केवल देवों के।

ऊँचा ललाट, होठों पर चिर परिचित मन्द मन्द सी मुस्कान, आँखों में प्रसन्न भाव, सम्पूर्ण सन्तोषी स्वभाव, लम्बी दुबली सी काया : क्या सचमुच आज के स्वार्थी संसार में ऐसी मानवता सम्भव भी है ! आश्चर्य तो होता ही है।

देवेन्द्र जी, मुझसे लगभग दो–ढाई वर्ष बड़े हैं परन्तु सन्तुलित भोजन, दैनिक व्यायाम, देवी सी पत्नी का सौहार्द, दो भोली भोली बेटियों के स्नेह एवं आदर पात्र इत्यादि के योगदान से और स्वयं उनके सुमधुर आदरपूर्ण व्यवहार से तो मैं उनको उम्र में बिल्कुल बराबर का या शायद कुछ छोटा ही मानता रहा। आज नेशनल अकादमी ऑफ़ साइंसेज़, इलाहाबाद जिसमें वह सन् 1949 ही में फेलो निर्वाचित हो गए थे, की वार्षिक पुस्तिका में उनकी जन्म तिथि 1919 देख कर उनके प्रति और भी अधिक नतमस्तक हो गया।

देवेन्द्र जी के प्रथम दर्शन मुझे सन् 1939 में

प्रमदाचरण बनर्जी छात्रावास में भाई अजितराम वर्मा के कमरे में हुए थे। भाई अजित राम से मेरा परिचय सुनकर उन्होंने अपने स्नेह की सुमधुर धारा में प्रथम क्षण ही में आत्मविभोर कर लिया और उस प्रथम क्षण में मेरे हृदय पर जो अमिट ठाप पड़ी वह 62–63 वर्षों के अन्तराल में तनिक भी धूमिल नहीं हुई है।

सन् 1954 में मैं लखनऊ चला गया, परन्तु सन् 1958 में फिर गोरखपुर में अत्यन्त निकटता से उनके साथ कार्य करने का सुअवसर मिला। उन्होंने अपने कठिन परिश्रम तथा निष्ठा से उत्तर प्रदेश के उस पिछड़े भाग में स्थित गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिक शास्त्र को पठन पाठन एवं अनुसन्धान के सभी क्षेत्रों में अति उच्चकोटि का संस्थान बना दिया है। हम सबको प्रसन्नता है कि कुछ मास पहले ही गोरखपुर विश्वविद्यालय के अधिकारियों और उनके पुराने सहयोगियों ने विश्वविद्यालय के भौतिक शास्त्र के विभाग को उन्हीं के नाम से सम्बन्धित कर अत्यन्त पुनीत कार्य किया है।

इलाहाबाद विश्वविद्यालय में कुछ वर्ष स्पेक्ट्रोस्कोपी के खोज कार्य के बल पर शर्मा जी शायद 1949 में ही कैनेडा की पोस्ट डाक्टरेट फेलोशिप के प्रथम चरण में ही चयनित होकर ओटावा विश्वविद्यालय में नोबेल पुरस्कार विजेता हर्ज़बर्ग के साथ काम करने चले गए थे। इसके लगभग 25–26 वर्षों बाद मेरी भेंट प्रोफेसर हर्ज़बर्ग से दिल्ली विश्वविद्यालय में उनको मानद डी.एससी. प्रदान करते समय हुई और बातों ही बातों में जब प्रोफेसर शर्मा का ज़िक्र आ गया, तो उस समय भी प्रोफेसर हर्ज़बर्ग ने उनकी खुले दिल से प्रशंसा की।

मैं तो 1962 में गोरखपुर छोड़कर जयपुर आ गया, परन्तु कुछ वर्षों बाद मुझे कमेटी का सदस्य होने का सौभाग्य मिला जिसे गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति पद के लिए नए नामों का सुझाव देना था। प्रसन्नता है कि उत्तर प्रदेश सरकार ने हम लोगों का सुझाव स्वीकार कर लिया और उन्हें ही गोरखपुर विश्वविद्यालय का कुलपति नियुक्त कर दिया और समग्र रूप से उसी विश्वविद्यालय की प्रशासनिक सेवा का अवसर दिया, जिसमें उनके शैक्षणिक और अनुसन्धान की ख्याति आज भी सर्वप्रमुख है। विषम परिस्थितियों में उन्होंने खगोल भौतिकी, ठोस अवस्था भौतिकी, जैव भौतिकी आदि दिशाओं में 29 छात्रों को डाक्टरेट डिग्री प्रदान करवाई। उनके उस समय के शोध पत्रों का भी उल्लेख : Handbuch der Physik, हर्ज़बर्ग द्वारा सम्पादित Molecular Spectroscopy Volume I तथा III, लाइनस पाउलिंग की अति प्रसिद्ध कृति Nature of Chemical Bond : Gaydon की प्रसिद्ध पुस्तक Dissociation Energies आदि में मिलता है। गोरखपुर विश्वविद्यालय के बाद शर्मा जी ने सन् 1978 से 1982 तक इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति का भार अत्यन्त सुचारु रूप से चलाया, जिसका आभास मुझे तब हुआ जब मुझे उन्हीं के आतिथ्य में इन्दौर विश्वविद्यालय में कुछ कार्यवश 3–4 दिन वहीं रहना पड़ा।

सन् 1954 में शर्मा जी को उत्तर प्रदेश का शिक्षा मंत्री मेडल प्रदान किया गया और लगभग उसी समय उन्हें इण्डियन फ़िजिकल सोसाइटी में 'साहा मेमोरियल भाषण' के लिए आमन्त्रित किया गया।

वैज्ञानिक विषयों में हिन्दी में लिखने में उनको पिछले 6–7 दशकों से विशेष रुचि है। वे 1956–59 तक 'विज्ञान' मासिक के प्रधान सम्पादक थे। मार्च 2002 के मासिक 'विज्ञान' में ही उनका राष्ट्रीय विज्ञान दिवस पर अति रोचक लेख प्रकाशित हुआ है जिसमें उनके द्वारा लिखित शब्द उनके विचारों की गहनता, साथ ही सत्य को सीधा पकड़कर अति रोचक शब्दों में व्यक्त करने की क्षमता प्रदर्शित करता है। उदाहरण के लिए:

"रामन की शोध यात्रा वाद्य यंत्रों के सुरीले स्वरों से प्रारम्भ होकर सागर की श्यामल धवल हिलोरों द्वारा प्रकाश के प्रकीर्णन और विवर्तन से होती हुई मणियों की जगमगाहट तथा फूलों के रंगों द्वारा दृष्टि विज्ञान की गुत्थियाँ सुलझाने तक पहुँची। रामन का सौन्दर्य बोध और प्रकृति प्रेम वर्ड्सवर्थ की उन पंक्तियों की सहसा याद दिलाता है, जिनका आशय कुछ इस

प्रकार है–

मुझमें नगण्यतम खिलता फूल
उन विचारों का करता संचार
पाने में जिनकी गहराई
है घोर तपस्या सी लाचार।

सुपात्रों में ज्ञान के प्रादुर्भाव और प्रसार को भास्कराचार्य ने कितने सुन्दर शब्दों में किया गया है :

"जले तैल खले गुह्यं पात्रे दानं मनागपि
प्राज्ञे शास्त्रं स्वयं याति विस्तारं वस्तुशक्तितः"

उनके हिन्दी लेखन की रुचि एवं उपलब्धियों से प्रभावित होकर उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान ने सन् 1984 में 'संस्थान सम्मान' एवं सन् 2000 में 'विज्ञान भूषण' से अलंकृत किया। विज्ञान परिषद् ने भी सन् 1997 में उन्होंने 'विज्ञान भास्कर' की पदवी देकर गौरवान्वित किया।

सन् 2000 में भारत के अनूठे राष्ट्रीय विश्वविद्यालय बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी ने प्रोफेसर शर्मा को मानद डी.एससी. से अलंकृत कर अपने को सौभाग्यशाली माना। परन्तु जिस निर्णय ने उन्हें सबसे अधिक प्रसन्न किया वह था : गोरखपुर विश्वविद्यालय ने सन् 2002 में अपनी भौतिक प्रयोगशाला का नामकरण 'देवेन्द्र शर्मा सेन्टर फॉर ऐस्ट्रोफिजिकल स्टडीज' रखा।

विज्ञान परिषद् का मैं अत्यन्त आभारी हूँ कि शर्मा जी के विद्यार्थीतुल्य भारत के शिक्षा मंत्री प्रोफेसर मुरली मनोहर जोशी जी की प्रेरणा से वर्तमान सम्मान अंक का शुभारम्भ किया गया और मुझसे भी उस अंक में कुछ योगदान का अनुरोध किया गया जिसके लिए मैं अपने को अत्यन्त भाग्यशाली मानता हूँ।

प्रोफेसर एमेरिटस,
राजस्थान विश्वविद्यालय
4/682, जयपुर विश्वविद्यालय, जयपुर-302004

संदेश

राजनाथ सिंह

विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा डॉ० देवेन्द्र शर्मा जी के सम्मान में 'विज्ञान' के विशेषांक का प्रकाशन किया जा रहा है। इस विशेषांक के अध्ययन से छात्रों तथा आम जनमानस को नई नई जानकारी एवं प्रेरणा मिलेगी।

विज्ञान विषय की जानकारियों पर आधारित विशेषांक 'विज्ञान' के सफल प्रकाशन हेतु मेरी शुभकामनाएँ।

पूर्व मुख्यमंत्री
नेता, भारतीय जनता पार्टी
विधानमण्डल दल, उत्तर प्रदेश
विधान भवन, लखनऊ

डॉ0 शिवगोपाल मिश्र
विज्ञान परिषद् प्रयाग
महर्षि दयानन्द मार्ग
जनपद-इलाहाबाद

मेरे प्रेरणा स्रोत : डॉ0 शर्मा

डॉ० राधे मोहन मिश्र

सन् 1961 में मैंने भौतिकी विभाग में कार्य शुरू किया। सहायक प्रोफेसरों के समूह में मैं सबसे कनिष्ठ और संभवतः सबसे कम उम्र का था। उस समय विभाग चार वर्ष पुराना था तथा प्रो0 शर्मा उसके अध्यक्ष थे। विभाग का माहौल पारिवारिक था, और उसमें प्रो0 शर्मा का स्थान पितृतुल्य था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अपने अध्ययन काल के दौरान प्रो0 शर्मा को जानता था। उनकी छवि छात्रों के बीच एक सर्वोत्तम शिक्षक की तथा सहयोगियों के बीच एक उत्कृष्ट व्यक्ति की थी। छात्रों में उनके उग्र तेवरों की भी चर्चाएं होती थीं। विभाग में नियुक्ति के कुछ ही सप्ताह पश्चात् मुझे उनके तेवर देखने का अनुभव हुआ। आदर्शवादी तथा कर्तव्य के प्रति समर्पित वे सदा मानवीय व कोमल भावनाओं से भरे रहते थे। उनकी ईमानदारी और लगन अद्वितीय थी। उन्होंने अपने सहयोगियों के प्रति जो सज्जनता प्रदर्शित की, वह भुलाई नहीं जा सकती।

प्रो0 शर्मा हम लोगों के लिए प्रेरणा व शक्ति के स्रोत थे। मेरे शोधकार्य के प्रति उनका अनुराग औपचारिकताओं से परे था। मैं एम.एससी. उत्तीर्ण करने के तत्काल बाद विभाग में नियुक्त हो गया था। पी. एचडी. शोध के लिए मैंने 'आइंस्टीन का सामान्य सापेक्षता सिद्धान्त' चुना था और गणित विभाग के प्रो0 आर.एस. मिश्र के साथ पंजीकृत हुआ। दो महीने बाद प्रो0 मिश्र अमेरिका में इंडियाना विश्वविद्यालय चले गए और उसके बाद वे गोरखपुर वापस न आकर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में गणित विभाग के अध्यक्ष बन गए। अतः मुझे अपना शोधकार्य स्वतः ही करने को बाध्य होना पड़ा।

उस समय, 1961 के अंत में मैं आइंस्टीन के 1939 में प्रकाशित एक शोधपत्र पर, जो शोध पत्रिका 'एनल्स ऑफ मैथेमैटिक्स' में 'On a stationary system with a spherical symmetry consisting of many Gravitating Masses' शीर्षक से छपा था, कार्य कर रहा था। इस पत्र में आइंस्टीन ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया था कि खगोलीय पिंड, ब्लैक होल इतने सघन होते हैं कि उनका गुरुत्वाकर्षण प्रकाश को भी खींच सकता है– संभव नहीं है। उस समय तक 'ब्लैक होल' शब्द की निर्मिति नहीं हुई थी। इस शोधपत्र की गणनाओं को विस्तार से पुनः उद्धृत करने के दौरान मैंने यह देखा कि गुरुत्वीय क्षेत्र के समीकरण शुद्ध नहीं हैं। मेरे जैसे एक युवा के लिए, जिसने अभी ठीक प्रकार विषय में प्रवेश नहीं किया हो, यह एक उत्साहजनक खोज थी। जब मैंने यह बात प्रो0 शर्मा को बताई तो उन्होंने भी उत्साह प्रदर्शित किया और मुझसे सभी गणनाएं दोहराने और अलग अलग विधियों से परिणाम को कई बार जांचने को कहा। उन्होंने प्रत्येक बार अत्यंत सजगता दिखाई। पूरी तरह संतुष्ट होकर ही उन्होंने मुझसे शोधपत्र लिखने को कहा और तत्काल इसे प्रकाशन के लिए भिजवाया। इस प्रकार 1964 में मेरा प्रथम शोधपत्र 'Nuovo Gmento' प्रकाशित हुआ।

प्रो0 शर्मा आज भी मेरे लिए प्रेरणा स्रोत हैं। मैं ईश्वर से उनकी दीर्घायु की कामना करता हूं।

पूर्व कुलपति
गोरखपुर विश्वविद्यालय

अत्यन्त सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत

*प्रो० वी०डी० गुप्त तथा
**डॉ० चन्द्रमोहन नौटियाल

प्रो. वी.डी. गुप्त : प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा से मेरा सम्पर्क लगभग आधी शताब्दी पुराना है जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में एम.एससी. भौतिकी का विद्यार्थी था। समय के साथ सम्पर्क तथा सम्बन्ध दोनों प्रगाढ़तर होते गए। मात्र गुरु शिष्य के सम्बन्धों से कहीं अधिक। उनके व्याख्यान आज भी हमारे मानस में अंकित हैं। बाईबल में कहा गया है कि धन्य हैं वे जो लोगों के साथ प्यार बाँटते हैं क्योंकि वे लोगों के मन पर राज करेंगे। धन्य हैं वे लोग जो लोगों के साथ ज्ञान बाँटते हैं क्योंकि वे लोगों के मस्तिष्क पर राज करेंगे। प्रोफेसर शर्मा उन दुर्लभ अध्यापकों में से रहे हैं जो अपने विद्यार्थियों के मन मस्तिष्क दोनों पर राज करते हैं।

डॉ. चन्द्र मोहन नौटियाल : मेरी पहली भेंट 1975 में हुई थी। तब मैं देवनागरी कॉलेज, मेरठ में बी.एससी. (ऑनर्स) का छात्र था तथा विद्यालय की बोस फिजिकल सोसाइटी का महासचिव भी। सोसाइटी के तत्वाधान में प्रोफेसर शर्मा ने 'हम तथा ब्रह्माण्ड' विषय पर हिन्दी में व्याख्यान दिया था। हम में से किसी ने इससे पूर्व ऐसे विषय पर किसी का व्याख्यान नहीं सुना था। निस्तब्ध, मन्त्रमुग्ध से हम सब एक अनजानी यात्रा पर हो आए। ऐसे गूढ़ विषय पर धारा प्रवाह हिन्दी में बोला तथा समझाया जा सकता है सोचना कठिन था। यह अविस्मरणीय अनुभव था। यह मानना कि मैं उनके विशेष स्नेह या अनुग्रह का कभी पात्र रहा, सच नहीं होगा। लेकिन जितना सम्पर्क मेरा आगे उनसे बना, मेरे लिए वही पूँजी है। उनके जैसे उदारमना व्यक्ति ने मेरे जैसे असंख्य विद्यार्थियों को प्रेरणा तथा स्नेह दान किया होगा।

प्रो. वी.डी. गुप्त : कठिन विषय को सरल तथा सुबोध बना देना प्रोफेसर शर्मा की विशिष्टता है। इलाहाबाद में उन्होंने केवल वर्णक्रममिति पर नहीं बल्कि भौतिकी की दूसरी शाखाओं पर भी नियमित रूप से व्याख्यान दिए। मुझे याद है कि उनके कनाडा से लौटने के पूर्व ही उनका आगमन विभाग में काफी उत्सुकता तथा चर्चा का विषय था। वे कनाडा में प्रोफेसर हर्ज़बर्ग तथा प्रोफेसर डगलस के साथ शोध कर रहे थे तथा विश्वविद्यालय में सुपरिचित थे।

डॉ. चन्द्र मोहन नौटियाल : प्रोफेसर शर्मा से मैं अगली बार 16 वर्षों बाद मिला। अब मैं रुड़की, अहमदाबाद के बाद लखनऊ में बीरबल साहनी पुरावनस्पति विज्ञान संस्थान में था। मन बना कि प्रोफेसर सी.वी. रामन पर लखनऊ दूरदर्शन के लिए कार्यक्रम रिकार्ड किया जाए। इस सन्दर्भ में जब मैंने प्रोफेसर शर्मा से भेंट की तो पुरानी स्मृति उभर आई। मैंने घर जाकर विद्यालय पत्रिका ढूँढ निकाली (मैं उसका सम्पादक था) तथा अगली बार मिलने पर वह रिपोर्ट दिखाई जिसमें उनके व्याख्यान का उल्लेख था। मैंने एम. एससी. रुड़की विश्वविद्यालय से किया था (अब आई. आई.टी.) तथा धीरे धीरे पता चला कि हमारे अनेक अध्यापक प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा के विद्यार्थी/विद्यार्थीतुल्य रह चुके थे।

जब मैं कार्यक्रम के विषय में चर्चा करने अगली बार उनके घर गया तो उन्होंने रामन प्रभाव को समझाने के लिए स्वयं रेखाचित्र बना कर तैयार रखे थे।

इसी के बीच यह बात भी निकली कि प्रोफेसर शर्मा के शोध प्रबन्ध के परीक्षक स्वयं प्रोफेसर रामन थे। मैं प्रोफेसर रामन को प्रोफेसर रमण कह रहा था– यह सोचकर कि कार्यक्रम हिन्दी में है तथा 'रामन' अवश्य 'रमण' का अपभ्रंश होगा तथा इसलिए ग़लत। प्रोफेसर

शर्मा ने मुझे शुद्ध किया कि सही नाम 'रामन' ही है।

प्रो. वी.डी. गुप्त : छोटी छोटी बातों का भी ध्यान रखना प्रोफेसर शर्मा की विशेषता थी। ऐसा न होता तो गोरखपुर विश्वविद्यालय में शून्य से आरम्भ करके इतना बड़ा विभाग कैसे बना पाते। मेरा सम्पर्क कानपुर, इलाहाबाद, लखनऊ तथा इलाहाबाद चारों नगरों में छात्र, अध्यापक तथा कुलपति के विविध रूपों में रहा है। प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा भी मुख्यतः इन्हीं स्थानों पर रहे अतः स्वाभाविक रूप से मेरा उनसे तथा उनके इष्टमित्रों से सतत् सम्पर्क रहा। मेरा परीक्षक के रूप में भी प्रायः गोरखपुर जाना होता था (कहने की आवश्यकता नहीं कि प्रोफेसर शर्मा ही आमन्त्रित करते थे) तथा रहना प्रोफेसर शर्मा के यहाँ ही होता था। उनका तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती महिमा शर्मा का आतिथ्य का सौभाग्य मुझे बार बार मिलता रहा।

डॉ. चन्द्र मोहन नौटियाल : लखनऊ में मिलने के बाद तो प्रायः उनसे भेंट होती रही– उनके निवास पर, व्याख्यानों में, विज्ञान प्रौद्योगिकी परिषद् तथा बाल विज्ञान कांग्रेस के कार्यक्रमों में जिसकी अध्यक्षता का हमारा निमन्त्रण भी उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया।

एक अवधि में मेरा कहीं आना–जाना निजी कारणों तथा कुछ व्यस्तता के कारण बहुत सीमित रहा परन्तु जब भी, जहाँ भी हम मिले वे कभी मेरी तथा परिवार की कुशलक्षेम लेना नहीं भूले।

दूरदर्शन वाला पहला कार्यक्रम तो कतिपय तकनीकी कारणों से रिकार्ड नहीं हो पाया परन्तु विज्ञान दिवस के लिए एक विशेष परिचर्चा में उन्हें तथा कुछ राष्ट्रीय शोध संस्थानों के निर्देशकों को परिचर्चा के लिए आमन्त्रित किया तो प्रोफेसर शर्मा ने सहर्ष आकर रिकार्डिंग कराई।

चाहे उनके निवास पर मिले या किसी कार्यक्रम में उनका व्यवहार इतना मधुर तथा कोमल है कि पता लग जाता है कि ये किसी को ठेस नहीं पहुँचा सकते। कभी–कभी विज्ञानेतर चर्चा में मैं अपना मतभेद प्रकट भी कर देता तो उन्होंने कभी यह नहीं जताया (न ही अनुभव किया) कि केवल कनिष्ठ, कम आयु का होने या ऐसे किसी भी कारण से मैं मत बदलूँ।

प्रो. वी.डी. गुप्त : मैं भी पूर्णतः सहमत हूँ। परन्तु यहाँ यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि मृदु होने के साथ साथ वे दृढ़ भी हैं, सिद्धान्तों पर समझौता नहीं करते। अनुशासनप्रियता उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। दबाव से, शोर मचा कर या ऐसी किसी दूसरी बात से उनसे अनुचित बात मनवा लेना संभव नहीं है। एक बार विश्वविद्यालय में वे घंटों सब्र से चिलचिलाती धूप में यूनियन के नेताओं की बात सुनते रहे परन्तु उन्होंने अपना निर्णय नहीं बदला। कड़ी धूप में खड़े खड़े थक चुके नेता समझौते का मार्ग ढूँढ़ने लगे तथा हार कर हठधर्मिता छोड़नी पड़ी। जहाँ तक विनम्रता की बात है, यदि वे कार चला कर जा रहे हों तथा कोई नमस्कार करे तो वे कार रोक कर, स्टीयरिंग छोड़कर करबद्ध होकर अभिवादन स्वीकार करते हैं।

डॉ. चन्द्र मोहन नौटियाल : मैं तो उनके विद्यार्थियों के भी विद्यार्थियों की श्रेणी में आता हूँ। हर तरह से इतना अन्तर होने के बाद भी मुझे स्मरण नहीं कि कभी उनसे मिलने गए, परिवार के साथ या अकेले, और वे मुख्य द्वार तक छोड़ने न आए हों। वे तथा उनकी धर्मपत्नी दोनों अतीव स्नेही हैं। वृक्ष का फल के साथ झुक जाने की बात यहाँ पूर्णतः चरितार्थ होती है।

प्रो. वी.डी. गुप्त : प्रोफेसर शर्मा अत्यन्त सुशिक्षित तथा सुसंस्कृत परिवार से हैं तथा यही उनके परिवार में झलकता भी है।

डॉ. चन्द्र मोहन नौटियाल : मैं प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा जैसे व्यक्तित्व के सम्पर्क में आना शुभ संयोग तथा सौभाग्य मानता हूँ। वर्षों पूर्व किन्हीं कुलपति का प्रगल्भ तथा प्रभावशाली व्याख्यान सुनने के बाद उनसे इस तरह नए स्थान पर भेंट हो तथा सम्पर्क होता रहे तथा स्नेह प्राप्त हो तो किसे अच्छा नहीं लगेगा।

प्रो. वी.डी. गुप्त : प्रोफेसर शर्मा शतायु हों, उनका वरदहस्त हम पर रहे तथा दिशा निर्देश प्राप्त होता रहे, हमारी हार्दिक इच्छा है।

डॉ. चन्द्र मोहन नौटियाल : हम सभी की यही मंगल कामना है।

***पूर्व कुलपति**
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
****वैज्ञानिक,**
बीरबल साहनी पुरावनस्पति अनुसंधान संस्थान
लखनऊ

प्रो० देवेन्द्र शर्मा

प्रो० कमलाकान्त चतुर्वेदी

डॉ0 देवेन्द्र शर्मा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्राध्यापक, गोरखपुर विश्वविद्यालय में विभागाध्यक्ष तथा कुलपति रहे, तत्पश्चात् देवी अहिल्या की पावन नगरी इन्दौर में देवी अहिल्या विश्वविद्यालय इन्दौर के कुलपति रहे। डॉ0 देवेन्द्र शर्मा की छवि में अकल्पित पारदर्शिता, दूरदर्शिता, नम्रता के अलावा उनकी निरभिमानता सर्वोपरि थी। जो भी उनसे मिलता, उनके सद्व्यवहार एवं सज्जनता का कायल हो जाता। उनसे मिलने वाले व्यक्ति का कद चाहे जो हो, जिस सहजता एवं आत्मीयता से वे लोगों का अभिवादन लेते थे या करते थे उसमें उनके गौरवमय व्यक्तित्व के साथ साथ भारतीय संस्कृति एवं उच्च संस्कार से महिमामंडित पुरुष के दर्शन स्पष्ट थे। ऐसे डॉ0 शर्मा जो यथार्थ से जुड़कर ऐसी नींव तैयार कर गए जो आज इस शहर को गौरवान्वित होने का अवसर प्रदान कर रही है। एक बार उनके कार्यकाल के दौरान जब विश्वविद्यालय में मानविकी संकाय के अध्यापन को प्रारम्भ किया गया तब इन प्रकरणों से सम्बद्ध अत्यंत आवश्यक आदेश लेकर समय सीमा में डॉ0 साहब स्वयं उपस्थित हुए, इस घटना से इतिहास के एक वरिष्ठ प्राध्यापक अभिभूत हो गए। यह घटना यूँ तो अत्यंत साधारण प्रतीत होती है किंतु इतने उच्चपद पर आसीन व्यक्ति का व्यवहार इतना सहयोगपूर्ण एवं विनम्र अन्यत्र कम ही देखने को मिलता है।

कर्मचारियों के हितों की रक्षा का दायित्व आपने सफलतापूर्वक निभाया, हमेशा समस्या की तह में जाकर उसके निदान का प्रयत्न करते थे। आपके कार्यकाल में कर्मचारियों की ओर से कोई विरोध या अप्रिय घटना तो घटी ही नहीं। कर्मचारियों की यही टिप्पणी कि उन्होंने डॉ0 साहब को न तो कभी नाराज देखा, न ही उग्र मिजाजी देखी, उनके उत्कृष्ट रचनात्मक व्यवहार का द्योतक है। आप आज भी इन कर्मचारियों के बीच प्रेरक प्रसंग हैं, आपके प्रति इनका सद्भाव आज भी जाग्रत है।

डॉ0 साहब जहाँ अच्छे शोधकर्ता, शिक्षक रहे वहीं श्रेष्ठ प्रशासक भी रहे। आपके कई शोधार्थी इलाहाबाद एवं अन्य विश्वविद्यालयों में प्राध्यापक तथा विभागाध्यक्ष हैं, एवं कुछ मंत्री आदि पद भी प्राप्त कर चुके हैं। एक अच्छे शिक्षक के रूप में आपके विद्यार्थी आज भी आपको याद करते हैं एवं आपके पढ़ाए विषयों, प्रसंगों का उल्लेख करते हैं। जब जब क्षेत्रीयता की भावना से प्रभावित होकर सदस्यगण मुद्दों पर चर्चा करते तब डॉ0 साहब अपनी सरलता, सजगता के बल पर उस मनोमालिन्यपूर्ण वातावरण में भी शिक्षा हित के परिप्रेक्ष्य में सदस्यों की स्वीकृति लेने में समर्थ होते थे। प्रतिमाह विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी की बैठक में डॉ0 शर्मा सदस्यों के साथ अत्यंत सहृदयता, विनम्रता एवं प्रजातांत्रिक ढंग से पेश आए या कार्यकारिणी के सदस्यों के लिए अपने आप में एक अनूठा अनुभव रहा यद्यपि विश्वविद्यालयीन शिक्षा और शैक्षिक परिवार दलगत राजनीति से अछूता नहीं रहता है। कभी कभी किन्हीं सूत्रों को जोड़कर राजनीति का रूप भी दिया जाता है। यही परिस्थिति इन्दौर में भी निर्मित हुई। डॉ0 शर्मा को किसी राजनैतिक दल विशेष का जामा पहनाने की कोशिश स्थानीय समाचारपत्रों ने की। डॉ0 साहब के व्यक्तित्व ने इन प्रयासों के घेरे को तार तार कर दिया। इनके सम्बन्ध में सभी दलों के नेतृत्व क्षमता वाले

व्यक्तियों से मधुर थे। अमूमन कुलपति प्रशासनिक, राजनैतिक एवं सामाजिक दबाव में कुछ अयोग्य लोगों का महत्वपूर्ण पदों पर चयन कर लेते हैं परंतु आपके कार्यकाल में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता है।

डॉ0 शर्मा के कार्यकाल में विश्वविद्यालय ने सर्वोन्मुखी उन्नति की– अनेक नए विषय तथा पूर्व विषयों के अध्ययन क्षेत्र में विस्तार हुआ। चार वर्ष की अल्प अवधि में विश्वविद्यालय के वातावरण में डॉ0 साहब ऐसी खुशबू बिखेर गए, कि अनेक अवसरों पर सबके मुँह से यह निकलता है कि यह तो डॉ0 देवेन्द्र शर्मा की देन है। वे शिक्षा के मंदिर के निष्ठावान, कर्मवीर पुजारी रहे एवं अपने अनोखे व्यक्तित्व की आकर्षक झलकियाँ समय के पृष्ठ पर उकेरने में सफल रहे। ऐसे डॉ0 शर्मा की विशिष्ट प्रतिभा को शब्दों में ज्यों का त्यों लिखना कठिन है परन्तु प्रगति पथ पर उनके प्रयास अनुकरणीय हैं एवं रहेंगे।

विजिटिंग प्रोफेसर
36, साईंकृपा
बाम्बे हास्पिटल के पास
इन्दौर

डॉ० देवेन्द्र शर्मा

प्रो० डी०डी० पन्त

प्रिय डॉ0 मिश्र,

क्षमा करें। आपको पहले नहीं लिख सका। कई महीनों से बीमार हूँ।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि सहयोगी मित्र डॉ0 शर्मा के सम्मान में 'विज्ञान' का विशेषांक निकाल रहे हैं। मेरी हार्दिक इच्छा थी कि मैं अपनी सौहार्दता विस्तार से लिखूँ पर मजबूर हूँ। अतः अपनी भावनाएँ संक्षेप में प्रकट कर रहा हूँ।

मेरा परिचय, 1944 के दिसम्बर माह में उनसे उनके घर इलाहाबाद में हुआ था। इण्डियन एकेडमी के वार्षिक सम्मेलन में आगरे से आया था। डॉ0 शर्मा ने प्रो0 असुंडी सहित हम कुछ लोगों को चाय पर बुलाया था। उनकी सज्जनता सर्वदा बनी रही। वे गोरखपुर गए और मैं नैनीताल। साल में दो चार बार उनके दर्शन हो जाते थे। घरेलू सम्बन्ध जैसे हो गए थे। ऐसा स्नेही मित्र उनके परिवार के सदस्य– मुझे प्राप्त हुआ। मैं धन्य हुआ।

परमात्मा उन्हें और श्रीमती शर्मा को सुखी रखे, यही इच्छा है।

प्रोफेसर एमेरिटस
एफ/6, जज फार्म
हल्द्वानी

स्मृतियों के झरोखे से

प्रो० नितीश कुमार सान्याल

प्रो0 देवेन्द्र शर्मा के संपर्क में आने का अवसर मुझे सर्वप्रथम पचास के दशक के आरंभ में मिला जब मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय में स्नातकोत्तर कक्षा का विद्यार्थी था। डॉ0 शर्मा उसी समय कनाडा की राष्ट्रीय शोध परिषद् में प्रो0 जी. हर्जबर्ग के साथ शोधकार्य करने के पश्चात् वापस लौटे थे। यह संपर्क पुनः बढ़ा जब मैं अक्टूबर 1958 में गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी विभाग के सहायक प्रोफेसर के रूप में नियुक्त हुआ जहां प्रो0 शर्मा प्रोफेसर तथा विभागाध्यक्ष थे। आरंभ में प्रो0 शर्मा के अतिरिक्त मात्र सात शिक्षक थे अतः एक लघु शिक्षक समुदाय में प्रो0 शर्मा के साथ निकट संपर्क तथा ज्ञान अर्जन का पूरा पूरा अवसर प्राप्त हुआ।

विश्वविद्यालय ने यह निर्णय किया कि जुलाई 1958 से स्नातक तथा परास्नातक दोनों ही स्तरों पर विज्ञान कक्षाएं आरंभ की जाएं। मजेदार बात यह कि विज्ञान शिक्षण की आधारभूत सुविधाओं तथा भौतिक साधनों का वहां पूर्ण अभाव था। विश्वविद्यालय में भवन के नाम पर उस समय विभाग स्थापित था। हम जैसे अनुभवहीन नवयुवकों के लिए यह सर्वाधिक कठिन और चुनौतीभरा समय था जिसमें हमें आरंभ से भौतिक विभाग का निर्माण करना था। शिक्षकों के लिए कोई निर्धारित समय सारणी नहीं थी किन्तु प्रो0 शर्मा इस बात के लिए प्रतिबद्ध रहते थे कि सभी कक्षाएं निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार चलें तथा प्रायोगिक कक्षाओं में कम से कम एक अध्यापक अवश्य उपस्थित रहे, चाहे इसके लिए उसे दोपहर का भोजन भी स्थगित करना पड़े।

संसाधन सीमित थे तथा आरंभिक दो वर्षों में कार्यशाला की सुविधा भी उपलब्ध नहीं थी। एक बार एक रोचक घटना हुई। विभाग ने एक दो मीटर अवतल ग्रेटिंग 'बाश एंड लांब' से खरीदी। प्रो0 शर्मा चाहते थे कि ग्रेटिंग स्थापित तथा क्रियाशील हो जाए। हमें शीघ्र इस कार्य को पूरा करने का निर्देश मिला। स्पेक्ट्रोस्कोपी का छात्र होने के कारण मुझे यह भार लेना पड़ा। औद्योगिक तथा तकनीकी रूप से गोरखपुर तब एक पिछड़ा क्षेत्र था। मैं कार्य के प्रति निराश था किंतु डॉ0 शर्मा ने मुझे कोई विकल्प नहीं दिया। अंत में हम बाजार गए और बैलगाड़ियों में लगाए जाने वाले लोहे के पहिए ले आए, जिससे उपयुक्त रोलैन्ड चक्र बनाया गया। प्रो0 शर्मा ने कैमरे का डिजाइन तैयार किया और उसका निर्माण हुआ। बैलगाड़ी के पहिए वाले रोलैन्ड चक्र, आयातित हिगलर स्लिट तथा पुराने पैकिंग बक्सों द्वारा निर्मित हाउसिंग के साथ ग्रेटिंग तैयार हुई। हमें यह तनिक भी आशा नहीं थी कि गोरखपुर के 'पांडे का हाता' में रहने वाला एक अनपढ़ लुहार स्पेक्ट्रोग्राफ को इस प्रकार जोड़ सकेगा कि वह उपकरण चालीस वर्षों के बाद भी आज तक क्रियात्मक बना हुआ है। हमारे लिए यह परम संतोष की बात थी। प्रो0 आर.के. आसुंदी जो प्रख्यात स्पेक्ट्रोस्कोपीविद्, अत्यंत अनुशासनप्रिय कठोर शिक्षक तथा परीक्षक थे, उन्होंने हमारे विभाग में आने पर शिक्षा के स्तर तथा प्रयोगशाला की सुविधाओं के बारे में संतोष व्यक्त किया। यह महत्वपूर्ण था क्योंकि हम सीमित संसाधन, समय तथा बजट में कार्य कर रहे थे।

प्रो0 शर्मा एक समर्पित शिक्षक तथा कठोर

विभागाध्यक्ष थे। वे सदैव पाठ्यक्रम का सबसे कठिन भाग स्वयं पढ़ाते थे और शिक्षण की आवश्यकताओं को पूरा करने में कोई छूट नहीं देते थे। गर्मी या बरसात, कक्षाएं समय पर चलती थीं। हम सभी जो अपेक्षाकृत युवा थे और कभी इन बातों को गंभीरता से नहीं ले पाते थे, बरसात होने पर विशेष सतर्क हो जाते थे क्योंकि तब प्रो0 शर्मा अपनी बरसाती और छाते की सहायता से अवश्य ही विभाग में समय से पहुंच जाते थे। स्वच्छता के प्रति वे अत्यंत सजग रहते थे। किसी भी प्रकार की गंदगी या गलियारे में साइकिल खड़ी देखते ही वे क्रोधित हो जाते थे। वे इसे स्वयं साफ करने या पहिये की हवा निकालने में हिचकिचाते नहीं थे। यह उनके ही प्रयासों के कारण संभव था कि मजीठिया भवन सदैव चमकता रहता था।

अत्यंत अनुशासनप्रिय एवं कठोर शिक्षक होते हुए प्रो0 शर्मा एक अत्यंत कोमल तथा संवेदनशील सहृदय मानव थे। वे कठिनाइयों के समय सभी की सहायता करने को तैयार रहते थे। वे अपने सहयोगियों की अत्यधिक देखरेख करते थे और उन्हें अपने शैक्षिक कार्यों को संपन्न करने की स्वतंत्रता दे रखी थी। आरंभिक वर्षों में सीमित स्थान होते हुए भी उन्होंने हम लोगों को 'क्यूबिकल' उपलब्ध कराए थे। यद्यपि कला संकाय के कुछ वरिष्ठ सदस्यों ने इस पर अपनी अप्रसन्नता प्रदर्शित की थी, किन्तु डॉ0 शर्मा द्वारा प्रदत्त इस सुविधा से विभाग में कार्य संस्कृति तथा शोध एवं शिक्षण हेतु प्रभावी प्रेरणा मिली। यह एक महान शिक्षाविद् की दूरदृष्टि थी। जब प्रो0 शर्मा विश्वविद्यालय में नियुक्त हुए, तो मजीठिया भवन निर्माणाधीन था। विश्वविद्यालय के कुलपति स्वर्गीय श्री बी.एन. झा ने निर्माण कार्य की देखरेख की सारी जिम्मेवारी उन पर डाल दी थी। वे नित्य 3 बजे से 4 बजे तक निर्माण कार्य की प्रगति देखने जाते थे और अपने सुझाव देते थे। उन्होंने कुशलतापूर्वक व्याख्यान कक्ष, प्रयोगशाला और तहखाने की डिजाइन तैयार की तथा कमरों की मापें उनको पूरी तरह याद थीं। व्याख्यान कक्ष की ढलान, गोलाई, बिजली के स्विच आदि छोटे से छोटे विवरणों पर उनका ध्यान रहता था।

आचार्य के रूप में प्रो0 शर्मा अपनी जिम्मेदारियों के प्रति सदा सजग रहते थे। उन्होंने स्वयं के लिए नियमों तथा आदर्शों के सर्वोच्च प्रतिमान बना रखे थे जिसे वे अपने सहयोगियों तथा परिवारजनों से भी पालन करने की अपेक्षा रखते थे। 1959 में एम.एससी. प्रथम वर्ष की परीक्षा के एक प्रश्नपत्र में छात्रों को कम अंक मिले थे जिससे सभी छात्र तथा उस विषय को पढ़ाने वाले शिक्षक असंतुष्ट थे। एक दिन उनकी बैठक में हम लोगों ने परीक्षक की आलोचना आरंभ कर दी। श्रीमती शर्मा भी इस आलोचना में शामिल हो गईं। प्रो0 शर्मा ने तत्काल इसका विरोध किया तथा स्पष्ट शब्दों में कहा कि परीक्षा जैसे गोपनीय कार्य के बारे में किसी प्रकार की सार्वजनिक चर्चा नहीं होनी चाहिए। यह हम लोगों के लिए एक नया पाठ था।

बहुत समय बाद 70 के दशक में उन्होंने मुझे प्रश्नपत्रों का परिमार्जन कार्यभार सौंपा जब किन्हीं तकनीकी कारणों से वे यह कार्य नहीं कर सकते थे। यह समय लगने वाला तथा उबाऊ कार्य होता था। एक बार किसी केंद्रीय विश्वविद्यालय के वरिष्ठ प्रोफेसर इस कार्य के लिए आए पर बाद में उन्होंने यह कहकर परिमार्जन कार्य करने से मना कर दिया कि इससे मेरे शोध कार्य में बाधा पड़ती है। प्रो0 शर्मा ने तत्काल तीव्र प्रतिवाद किया और कहा कि प्रत्येक विश्वविद्यालय प्रोफेसर के कुछ प्रशासनिक दायित्व होते हैं, जो प्रोफेसर उन्हें नहीं निभा सकता उसे प्रोफेसर कहलाने का कोई अधिकार नहीं है।

बाद के वर्षों में 1973 में प्रो0 शर्मा ने गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति पद का कार्यभार संभाला जिसे उन्होंने पूरी गरिमा, दृढ़ता, पारदर्शिता व उत्कृष्टता से निभाया। वे परीक्षाओं की पवित्रता तथा ईमानदारी को महत्व देते थे तथा सदा विश्वविद्यालय और संबद्ध महाविद्यालयों में उचित शिक्षण कार्य सुनिश्ति करते थे। वे स्वयं की असुविधाओं की ओर ध्यान न देते हुए अनियमितता को दूर करने में लगे रहते थे।

शेष पृष्ठ 21 पर

विद्वता और विनम्रता के धनी प्रो० देवेन्द्र शर्मा

डॉ० देवेन्द्र कुमार राय

देश के प्रसिद्ध भौतिकशास्त्री प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा उच्चकोटि के भौतिकीविद् होने के साथ ही विनम्र, विवेकशील तथा व्यवहारकुशल व्यक्ति हैं। वे अपने सहयोगियों और शिष्यों के साथ सदैव ही संहानुभूतिपूर्ण तथा प्रेमपूर्ण व्यवहार करते हैं इसलिए सभी उनसे प्रसन्न रहते हैं और उनके प्रति श्रद्धा रखते हैं। जिन संस्थानों में उन्होंने कार्य किया वहां अपनी कार्यकुशलता और प्रतिभा की छाप छोड़ी और उनके निवृत्त हाने पर भी सभी साथ कार्य करने वाले उनके प्रति वही श्रद्धा और स्नेह रखते हैं। यह क्षमता कम ही व्यक्तियों में पाई जाती है।

प्रो0 शर्मा का स्नेह, आशीर्वाद और मार्गदर्शन मुझे अपनी छात्रावस्था से ही सदैव सुलभ रहा और उनके व्यवहार तथा स्नेह में कभी अन्तर नहीं पड़ा। प्रो0 आर0के0 असुण्डी तथा प्रोफेसर नन्दलाल सिंह से उनका स्नेह संबंध था और एम.एससी. तथा पी.एचडी. के वे नियमित रूप से परीक्षक होते थे। इस प्रसंग में वे प्रायः हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रतिवर्ष आते रहते थे। उनका व्यक्तित्व माधुर्य मिश्रित गाम्भीर्य से ओतप्रोत है और उससे परीक्ष्य विद्यार्थी उनके प्रश्नों का उत्तर बिना झिझक देता था। यह उनके व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य है। परीक्षा के बाद वे सभी के साथ चायपान में सम्मिलित होते थे। प्रोफेसर नन्दलाल सिंह के यहां भोजन में भी वे सभी के साथ सम्मिलित होते थे। बाद में कई सेमिनारों और कान्फ्रेंसों में भी उनका हिन्दू विश्वविद्यालय में आगमन होता रहा। प्रोफेसर शर्मा जी को जब किसी कार्य के लिए हम लोगों ने स्मरण किया उन्होंने सदैव हम लोगों की श्रद्धा को उपेक्षित नहीं किया और कार्यक्रम में अपने वार्धक्य का ध्यान न कर सदा उपस्थित हुए। दूसरे की श्रद्धा और इच्छा का सम्मान करना शर्मा जी का सहज गुण है। किन्तु सरलता और सज्जनता के साथ ही कठोर अनुशासनप्रियता भी उनमें है, और वे अत्यन्त गम्भीर प्रकृति के पुरुष हैं। वस्तुतः वे नारियल के समान ऊपर से अत्यन्त कठोर तथा गम्भीर हैं और अन्दर से अत्यन्त सरल, सुस्वादु और लाभप्रद हैं।

जब मैं जुलाई 1960 में स्नातकोत्तर द्वितीय वर्ष का छात्र बनकर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के स्पेक्ट्रोस्कोपी विभाग (जो संप्रति भौतिकी विभाग का एक अंग बन गया है) में आया तो भारतवर्ष में मुक्त आणविक इलेक्ट्रानिक स्पेक्ट्रोस्कोपी के लिए तीन अच्छे केन्द्र माने जाते थे। ये केन्द्र थे आंध्र विश्वविद्यालय का भौतिकी विभाग जहां प्रो0 रंगधाम राव कार्यरत थे, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का स्पेक्ट्रोस्कोपी विभाग जहां प्रोफेसर आर.के. आसुण्डी के अवकाश ग्रहण के बाद प्रोफेसर नन्दलाल सिंह कार्यरत थे और गोरखपुर विश्वविद्यालय का भौतिकी विभाग जहां कुछ समय पूर्व ही प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा जी ने कार्यभार संभाला था। ऐसा नहीं था कि अन्य स्थानों पर स्पेक्ट्रोस्कोपी में शोध नहीं होता था– कानपुर के भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में प्रोफेसर पी. वेंकटेश्वरुलू, धारवाड़ विश्वविद्यालय में प्रोफेसर एन.आर. टाबड़े, इण्डियन एसोसिएशन फार कल्टीवेशन आफ साइंसेज, कलकत्ता

में प्रोफेसर एस.पी. सरकार, भाभा परमाणु केन्द्र में प्रोफेसर आर.के. असुण्डी, डी.एस.बी. कालेज नैनीताल में प्रोफेसर डी.डी. पंत आदि अपने सहयोगियों और छात्रों के साथ स्पेक्ट्रोस्कोपी की विभिन्न विधाओं पर अध्ययनरत थे और अच्छा कार्य हो रहा था।

सन् 1961 में स्नातकोत्तर परीक्षा पास करने के बाद शोध तथा अध्ययन के क्षेत्र में आने पर उनमें से अधिकतर विद्वानों से मिलने और विषय के संबंध में बात करने के अनेक सुअवसर प्राप्त हुए। ऐतिहासिक और भौगोलिक कारणों से कानपुर, नैनीताल, गोरखपुर और बनारस के शोध छात्रों तथा अध्यापकों में विशेष संपर्क बना। मेरा स्वयं का शोधकार्य अपने प्रथम दशक (1961) में चूंकि द्विपरमाण्विक एवं बहुपरमाण्विक (विशेष रूप से बेंजीन जैसे अणु) अणुओं के स्पेक्ट्रम से संबद्ध था अतः इस विधा के शोधकर्ताओं से घनिष्ठ संबंध बने। प्रोफेसर शर्मा के छात्रों द्वारा बहुपरमाण्विक अणुओं पर अनेक शोधपत्र प्रकाशित किए गए थे अतः उनके साथ एक मित्रवत् स्पर्धा का भाव भी विकसित हुआ। 1963 में बनारस तथा 1966 में गोरखपुर में आयोजित संगोष्ठियों के द्वारा आपसी संबंध और दृढ़तर हुए। इन संबंधों के कारण प्रोफेसर शर्मा को हम बनारस वाले उसी श्रद्धा और आत्मीयता से देखते थे जैसा प्रोफेसर नन्दलाल सिंह को। यही भावना नैनीताल के प्रोफेसर पंत तथा कानपुर के प्रोफेसर वेंकटेश्वरुलू के प्रति भी थी।

प्रोफेसर शर्मा की कठोर अनुशासनप्रियता से हम सभी थोड़ा भयभीत भी रहते थे। वे गंभीर प्रकृति के हैं और बहुधा शान्त रहते हैं। इन दोनों बातों से मैं उनके गंभीर संसर्ग में बहुत दिनों तक नहीं आया था। हालांकि प्रो0 शर्मा प्रायः बनारस आने पर मास्टर साहब (प्रोफेसर नन्दलाल सिंह) के घर आते थे और जहां उनका व्यवहार घर के सदस्य जैसा ही रहता था। एक बार किसी प्रसंगवश प्रोफेसर शर्मा अपनी धर्मपत्नी एवं अपनी पुत्री तथा जामाता के साथ मेरे घर पर ही रुके हुए थे। पुत्री और जामाता को सायंकाल किसी ट्रेन से जाना था। मैं और मेरे एक मित्र ने कहा कि हम दोनों स्टेशन तक जाकर इन लोगों को विदा करेंगे और प्रोफेसर शर्मा एवं उनकी धर्मपत्नी से अनुरोध किया कि वे घर पर ही रहें। स्टेशन पर प्लेटफार्म पर सीढ़ियों द्वारा जाने में उन्हें कष्ट होगा। मिसेज शर्मा ने तो हम लोगों के अनुरोध को स्वीकार कर लिया पर प्रोफेसर शर्मा ने कहा कि वे भी चलेंगे, उन्हें कोई असुविधा नहीं होगी। वे हम लोगों के साथ स्टेशन गए, बच्चों को ट्रेन में बिठाया, फिर वापस गए। उनके स्नेहपूर्ण व्यवहार को देखकर यह भान हुआ कि कठोर अनुशासन के साथ उनका हृदय अत्यन्त कोमल भी है।

हिन्दू विश्वविद्यालय के स्पेक्ट्रोस्कोपी विभाग में Al के हैलोजन यौगिकों के द्विपरमाणविक अणुओं के इलेक्ट्रानिक स्पेक्ट्रम पर लगभग 10 वर्षों तक कार्य होता रहा। इसमें डॉ0 रामसागर राय (संप्रति राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, दिल्ली) तथा डॉ0 जगदीश सिंह (संप्रति, भारतीय मौसम विज्ञान विभाग, दिल्ली), डॉ0 रामसमुझ राय (संप्रति अरिजोना विश्वविद्यालय, अमेरिका), प्रोफेसर श्याम बहादुर राय तथा प्रोफेसर कैलाश नाथ उपाध्याय सभी संलग्न थे। जैसा कि शोधकार्य करने से पहले होता है, हम सबने इन अणुओं पर पूर्व में किए गए कार्य की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया और हम लोग प्रोफेसर शर्मा द्वारा एस्ट्रोफिजिकल जर्नल में 1951–52 में प्रकाशित शोधपत्रों से अवगत हुए। इन शोधपत्रों में प्रोफेसर शर्मा ने इन अणुओं की इलेक्ट्रानिक ऊर्जा अवस्थाओं, उनके कंपन और घूर्णन स्थिरांकों पर अपने निष्कर्षों को प्रकाशित किया था। स्पेक्ट्रोस्कोप की विभेदक क्षमता एवं स्पेक्ट्रम की तीव्रता की कठिनाइयों को अपनी गहरी समझ और अन्तर्दृष्टि से लांघते हुए उन्होंने इन अणुओं की संरचना की अनेक जटिलताओं को सुलझाया था। हमारे सहयोगियों ने अपने परिश्रम से प्रोफेसर शर्मा द्वारा संकेतित अनेक पहलुओं का विशद अध्ययन प्रकाशित किया।

खगोल स्पेक्ट्रमों में विशेष रूचि : प्रयाग विश्वविद्यालय में विश्वप्रसिद्ध भौतिकविद् प्रोफेसर मेघनाद साहा द्वारा खगोल भौतिकी में स्पेक्ट्रोस्कोपी के उपयोग का जो सफल प्रतिपादन किया गया था, प्रोफेसर शर्मा पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा था। वास्तव में खगोलीय

पिंडों के स्पेक्ट्रम में उनकी अभिरुचि भी शायद उसी समय से बन गई। अतः गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी विभाग के प्रारम्भ से ही खगोल भौतिकी के विशेष अध्ययन की व्यवस्था प्रोफेसर शर्मा ने कराई। उनकी इस गहरी रुचि का आभास हम लोगों को विशेष रूप से तब हुआ जब उन्होंन विज्ञान परिषद् प्रयाग द्वारा संचालित प्रथम प्रोफेसर नन्दलाल सिंह स्मारक व्याख्यान पहली अगस्त 1997 को देने के लिए बनारस आमंत्रित किया गया। प्रोफेसर शर्मा ने अत्यन्त ही सरल एवं सुबोध हिन्दी में स्पेक्ट्रोस्कोप के झरोखे से विश्व ब्रह्माण्ड का दिग्दर्शन श्रोताओं को कराया।

यह हम सभी के लिए अत्यन्त हर्ष का विषय है कि भारत सरकार, उत्तर प्रदेश शासन तथा उत्तर प्रदेश राजकीय वेधशाला नैनीताल के सहयोग से गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्रोफेसर शर्मा अन्तरिक्ष विज्ञान शोधकेन्द्र की स्थापना की गई है। प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा जी के साथ कई कमेटियों में मुझे कार्य करने का भी अवसर प्राप्त हुआ। इन सभी कमेटियों की मीटिंगों में शर्मा जी का स्वभाव और कार्यपद्धति सहयोगात्मक रहती है। विरुद्ध परिस्थितियों में भी वे अपना संतुलन नहीं खोते हैं, सदैव सकारात्मक रुख रखते हैं। इसलिए मीटिंग के आयोजक या अधिकारी उनसे उद्विग्न नहीं होते हैं। यह उनकी कार्य पद्धति का परिचायक है। इसी कारण शर्मा जी का कोई विरोधी भी नहीं रहता। वे सूझबूझ और सहानुभूति से कार्य करते हैं।

प्रोफेसर शर्मा ने अध्यापक, विभागाध्यक्ष, दो विश्वविद्यालयों के कुलपति पद पर दीर्घकाल तक शैक्षणिक क्षेत्र में कार्य किया है। इन सभी पदों पर उन्होंने विशिष्टता और योग्यता के साथ कार्य किया है। इन सभी पदों की सफलता के साथ निर्वाह करना और सर्वत्र समान रूप से समादृत होना उनके व्यक्तित्व, पाण्डित्य और कार्यकौशल का परिचायक है। सुदीर्घ काल तक वे गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिक शास्त्र विभाग के अध्यक्ष रहे। उस समय पूर्वांचल विश्वविद्यालय नहीं था और गोरखपुर विश्वविद्यालय में महाविद्यालयों की बड़ी शृंखला थी। विश्वविद्यालय के अतिरिक्त इन सभी महाविद्यालयों में भौतिक शास्त्र की पढ़ाई प्रो० शर्मा की देखरेख में और मार्गदर्शन में होती थी। उनके व्यक्तित्व की छाप इन कालेजों के भौतिकशास्त्र के अध्यापकों पर भी थी और शर्मा जी की कार्यशैली और मार्गदर्शन से सभी प्रभावित थे और प्रशंसक थे। उनके निर्देश में शोध डिग्री प्राप्त करने वालों की लम्बी सूची है।

प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा प्रारम्भ से ही हिन्दी के उन्नायक तथा समर्थक रहे हैं। प्रयाग विश्वविद्यालय में अध्यापनकाल में ही वे 'विज्ञान' पत्रिका के संपादक रहे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में उन्होंने प्रो० नन्दलाल सिंह स्मृति व्याख्यान हिन्दी में दिया था। जब रामन शताब्दी वर्ष में मैंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की पत्रिका 'प्रज्ञा' के रामन विशेषांक का संपादन किया तो उसमें भी शर्मा जी ने सहर्ष प्रामाणिक निबन्ध प्रस्तुत किया। राष्ट्रभाषा में विज्ञान की प्रगति में उनकी सदैव रुचि रही तथा अपनी शक्ति और सीमा में उन्होंने योगदान दिया। वे भावुक व्यक्ति हैं और दूसरे के सुख दुख की सदैव चिन्ता करते हैं।

ऐसे विद्या-विनय-संपन्न महापुरुष के सुदीर्घ, स्वस्थ जीवन की मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं जिससे भावी पीढ़ी उनके मार्गदर्शन से लाभान्वित होती रहे।

भौतिकी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी–221005

तस्मै श्री गुरुवे नमः

प्रो० महेश्वर मिश्र

1958 की गर्मियां मेरे लिए अत्यंत उत्साहजनक थीं जब मैंने समाचारपत्रों में यह पढ़ा कि नवनिर्मित गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी विभाग खुल रहा है। फलतः जुलाई 1958 में मैंने भौतिकी की स्नातकोत्तर कक्षा में प्रवेश ले लिया।

जब मैंने विभाग में प्रवेश किया तो मैं एक लम्बे दुबले पतले तथा गौरवर्ण व्यक्ति से मिला जो प्रथम बार में ही सख्त तथा आकर्षक लगे। बाद में मुझे पता लगा कि वे प्रो0 देवेन्द्र शर्मा हैं तथा भौतिकी विभाग के अध्यक्ष हैं। वे विभाग में अपनी पत्नी तथा बच्ची 'गुड़िया' के साथ रहते थे। उन्होंने एक कमरे को परदे द्वारा शयन कक्ष तथा बैठक या कार्यालय में विभाजित कर रखा था। आरंभ में प्रो0 शर्मा के साथ दो अन्य शिक्षक स्व0 डॉ0 बी.एन. मेहरोत्रा तथा श्री श्रीविलास मणि त्रिपाठी थे। सितंबर-अक्टूबर 58 में श्री जी.पी. श्रीवास्तव, डॉ0 एन.के. सान्याल, श्री बी.बी. श्रीवास्तव, श्री वी.एन. सक्सेना और श्री एस.एन. खन्ना की नियुक्ति शिक्षकों के रूप में हुई। ये सभी युवक थे। प्रो0 शर्मा का सख्त रवैया सभी शिक्षकों तथा छात्रों को सतर्क रखता था और हम जब भी उनके पास जाते थे, तो पूरी तैयारी के साथ जाते थे।

एम.एससी. प्रथम वर्ष में हम कुल 10 छात्र थे और चंद तकनीकी कर्मियों और शिक्षकों के साथ विभाग एक परिवार जैसा लगता था जिसके मुखिया प्रो0 शर्मा थे। हमारी कक्षाएं सवेरे 9.50 बजे आरंभ होती थीं और कभी भी सूर्यास्त के पहले समाप्त नहीं होती थीं। प्रो0 शर्मा व अन्य शिक्षक न केवल शिक्षण कार्य करते थे अपितु

> डॉ० शर्मा का व्यक्तित्व नियमों तथा परंपराओं के बारे में कठोर तथा अकादमिक संदर्भों में खुलेपन का एक विरल मिश्रण है। डॉ० शर्मा व उनके सहयोगियों के बीच एक पीढ़ी का अंतराल होने के कारण उनका स्थान हम लोगों के बीच अभिभावक जैसा था। प्रो० शर्मा ने कभी भी शिक्षकों के सम्मान व गरिमा को ठेस नहीं लगने दी और ऐसे प्रत्येक प्रयास का डटकर सामना किया। मुझे याद है कि एक बार विश्वविद्यालय परिषद् की बैठक में किसी वरिष्ठ शिक्षक के प्रति एक अनुशासनात्मक मामले पर विचार चल रहा था। ऐसा लग रहा था कि यह द्वेषपूर्ण कार्य था। प्रो० शर्मा ने परिषद् की कार्यवाही के दौरान जमकर इसका विरोध किया तथा प्रस्ताव को गिराकर शिक्षक के सम्मान की रक्षा की। ऐसे अनेक अवसर आए जब उन्होंने आदर्शों के लिए कोई समझौता नहीं किया।

भौतिकी विभाग के नए भवन (मजीठिया भवन) तथा डिजाइन तैयार करने की जिम्मेवारी भी उन्हें ही निभानी पड़ती थी। चाय की मेज पर तथा प्रो0 शर्मा के कक्ष में सभी योजनाएं तैयार होती थीं।

हमें वे एम.एससी. प्रथम वर्ष में प्रकाशिकी पढाते थे। कक्षा में बोर्ड पर आरेख बनाते समय वे इस बात का विशेष ध्यान रखते थे कि आरेख उचित अनुपात में बने। शुद्धता की जांच के लिए वे अपनी उंगलियों का प्रयोग मापन हेतु करते थे। वे विषय की सूक्ष्मतम बातों को भी विस्तार से समझाते थे और उनके व्याख्यान एक चित्रोपम प्रभाव छोड़ते थे।

तब से लेकर, चार दशकों के अंतराल में प्रत्येक स्थिति में चाहे प्रशासनिक दक्षता, योजना या विभाग का प्रबंधन हो या कोई सामाजिक सकियता— प्रो0 शर्मा के विराट व्यक्तित्व ने हमारे जीवन के क्रम को दिशा प्रदान की है। जब मैं विभाग में शिक्षक नियुक्त हुआ और विभाग के शिक्षण तथा योजना में उनका सहयोगी बना, विभिन्न औपचारिक तथा अनौपचारिक बैठकों में या चाय की मेज पर जब जब मैंने उनसे विचार विमर्श किया, हर बार उनसे कुछ नया सीखने को मिला। जहां वे विभाग के संचालन में अनुशासनप्रिय व कठोर थे, वहीं वे अकादमिक मामलों में सभी को पूरी स्वतन्त्रता दिया करते थे। यही कारण था कि उन्होंने शोधकार्य के लिए अच्छी सुविधाएं और उत्तम वातावरण का निर्माण किया जिसके कारण न केवल उनके प्रिय विषय स्पेक्ट्रोस्कोपी अपितु सेमीकन्डक्टर, इलेक्ट्रानिक्स, एस्ट्रोफिजिक्स, सैद्धान्तिक भौतिकी, सालिड स्टेट भौतिकी, एक्सरे डिफ्रैक्शन, बायोफिजिक्स तथा पदार्थ भौतिकी के क्षेत्र में भी युवा सहयोगियों ने उच्चस्तरीय शोधकार्य किए। यह प्रो0 शर्मा के निरंतर निर्देशन व प्रोत्साहन द्वारा ही संभव हुआ।

पूर्व अध्यक्ष
भौतिकी विभाग
गोरखपुर विश्वविद्यालय

पृष्ठ 16 का शेष

एक बार उन्होंने देर रात मुझे तथा प्राणि विज्ञान के एक वरिष्ठ सहयोगी को अगली सुबह 6.15 बजे एक गोपनीय कार्य करने हेतु तैयार होकर आने को कहा। उन्होंने हमें तथा अपने ड्राइवर को भी गन्तव्य के बारे में कुछ नहीं बताया। अत्यंत गोपनीय रूप से हमने कुछ परीक्षा केंद्रों का दौरा किया तथा कुछ स्थानों पर जहां अनियमितताएं देखने को मिलीं, उन्होंने परीक्षा नियमों के अंतर्गत दोषियों पर तत्काल दण्डात्मक कार्यवाही करने में हिचकिचाहट नहीं दर्शाई।

मेरे संस्मरण अधूरे ही रहेंगे यदि मैं श्रीमती शर्मा की मेजबानी की चर्चा न करूं। पहले ही दिन से श्रीमती शर्मा ने हमें जो प्यार, सम्मान व घरेलू माहौल दिया तथा स्वादिष्ट व्यंजन खिलाए वे भूले नहीं जा सकते। ऐसा कोई भी दिन न होता जब श्रीमती शर्मा हमें बढ़िया नाश्ता न करातीं। होली के दिन उनके हाथों से बनी स्वादिष्ट गर्मागर्म गुझियों का स्वाद आज भी नहीं भूलता। विभाग में बाहर से आने वाले सभी अतिथियों का स्वागत वे पूरे उत्साह से करती थीं। उनकी दोनों बेटियां मधुलिका और निवेदिता भी उन जैसी ही थीं तथा अपने विवाह के बाद गोरखपुर छोड़ने तक वे भौतिकी विभाग के एक अंग की तरह रहीं।

प्रो0 शर्मा की महानता के बारे में अनेक पृष्ठ लिखे जा सकते हैं। मैं उन्हें एक कर्मयोगी, वास्तविक संन्यासी तथा ऐसा वैज्ञानिक मानता हूं जिसने अपनी शैक्षणिक व प्रशासनिक जिम्मेदारियों को पूरी निष्ठा से निभाया।

मैं उनके स्वस्थ, सक्रिय व शांतिपूर्ण दीर्घ जीवन की कामना करता हूं जिससे उनका आशीर्वाद एवं वरदहस्त हम पर तथा आने वाली पीढ़ियों के ऊपर बना रहे।

पूर्व कुलपति
राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

विद्या के धनी प्रो0 देवेन्द्र शर्मा के बारे में कुछ संस्मरण

डॉ० शशि भूषण

सन् 1967 में गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिक शास्त्र में प्रथम स्थान सहित प्रथम श्रेणी में एम.एससी. की परीक्षा उत्तीर्ण कर प्रो0 देवेन्द्र शर्मा के निर्देशन में मैंने शोधकार्य प्रारम्भ किया। सन् 1971 में पी.एचडी. की डिग्री प्राप्त कर सन् 1972 में रविशंकर विश्वविद्यालय में लेक्चरर बना। तत्पश्चात् 1984 में रीडर एवं 1994 में विभागाध्यक्ष का पद प्राप्त किया। तब से रीडर एवं विभागाध्यक्ष के पद पर कार्यरत हूं। अतः उनसे 6–7 वर्षों तक एम.एससी. एवं पी.एचडी. के छात्र के रूप में संबद्ध रहा। रायपुर उनका आगमन दो बार मेरे शोध छात्रों के पी.एचडी. की मौखिक परीक्षा लेने के लिए हुआ। अभी भी उनसे संबंध बना हुआ है। इसी आधार पर कुछ संस्मरण दे रहा हूं।

उनके कार्य करने का सबसे मजबूत पक्ष एक कर्तव्यनिष्ठ, अनुशासनप्रिय, समयबद्ध एवं सिद्धान्तवादी व्यक्ति के रूप में रहा है। अपने सिद्धान्त से समझौता करना उन्होंने सीखा नहीं है। देशप्रेम कूट कूट कर भरा है। किसी से छोटी सी गलती होने पर देशप्रेम की शिक्षा अवश्य दिया करते थे। उनके जैसा सिद्धान्तवादी व्यक्ति मैंने अपने जीवन में अब तक नहीं पाया। मैं उनके निर्देशन में पी.एचडी. की डिग्री पाने वाला संभवतः 24वां छात्र था। मुझे उन्होंने वैद्युत संदीप्ति पर कार्य करने को कहा था। इस क्षेत्र में गोरखपुर में पूर्व में कार्य नहीं हुआ था। अतः इस कार्य हेतु प्रयोगशाला बनाने से शोध कार्य पूर्ण होने तक हर तरह का सहयोग देते रहे। जब भी कोई नया कार्य करता था उन्हें सूचित करने पर शाम के समय टहलते हुए प्रयोगशाला में आते थे (कभी कभी उनके परिवार के सदस्य भी उनके साथ रहते थे) और काफी समय तक बैठकर कार्य देखते थे एवं निर्देशन एवं सलाह दिया करते थे। दिन भर विश्वविद्यालय के विभिन्न कार्यों में व्यस्त रहने के कारण वे शाम को आया करते थे। उनसे मैंने बहुत कुछ सीखा और उसी का परिणाम है कि मेरे निर्देशन में एक दर्जन से ऊपर पी.एचडी. एवं डेढ़ सौ के लगभग शोधपत्र छप चुके हैं। मेरी मेहनत से वे बहुत संतुष्ट रहते थे और नए क्षेत्र में कार्य करने के बावजूद उन्होंने कम समय में ही पी.एचडी. थीसिस लिखने की अनुमति दे दी। मेरे यह कहने पर कि मैं और कार्य करना चाहता था उन्होंने स्टाफ में आने पर बाकी कार्य को करने को कहा। मेरा यह सपना गोरखपुर में पूरा नहीं हुआ पर उसे रायपुर में एक समग्र रूप में कर पाया, यह उनके आशीर्वाद का फल है। वह अपनी खुशी शब्दों में व्यक्त नहीं करते थे पर उनकी आंखों में एवं उनके मन्द मुस्कुराहट में यह चीज देखी जा सकती थी। मुझे आज भी याद है कि जीवन के कुछ (दो) प्रथम शोधपत्र आई.आई.टी. खड़गपुर में आयोजित साइंस कांग्रेस में (1970) मैंने प्रस्तुत किया था। प्रो0 एल0एस0 कोठारी उस सेशन के चेयरमैन थे। डॉ0 साहब भी मौजूद थे। प्रस्तुतीकरण काफी सराहनीय रहा था। जिस खुशी का वर्णन मैंने ऊपर किया है वह उस समय मैंने उनकी आंखों में देखा था।

उनमें एकेडमिक कार्यों के अतिरिक्त प्रशासकीय क्षमता भी बेहद थी। केवल एक उदाहरण यहां उद्धृत

कर रहा हूं। एक बार उन्होंने मुझसे संबंधित एक फाइल को विभागीय क्लर्क से मांगा, काफी समय तक वह उसे ढूँढता रहा। उसे न पाने की वजह से भयवश उनके पास जाने से कतराता रहा। काफी इंतजार करने के बाद वे स्वयं कार्यालय में आए और कुछ ही मिनटों में उन्होंने फाइल निकाल दी। उन्हें अपने द्वारा किए गए कार्यों के प्रति-सम्मान की चिंता हमेशा रहती थी अतः किसी भी पत्र पर हस्ताक्षर करते समय ही उसे पूरा पढ़ लेते थे और किसी भी संशय की स्थिति में उसे तत्काल निरस्त भी कर देते थे।

उनमें मानवीय गुणों का भरपूर समावेश है। रायपुर में जब आने वाले थे तो मैंने अपने परिवार के सदस्यों को उनके कठोर अनुशासन के प्रति आगाह किया था। पर सभी सदस्य अत्यंत घुलमिल गए थे और किसी को भी मेरे द्वारा बताई गई कठोरता पर विश्वास नहीं होता था। घर से लेकर एयरपोर्ट तक उनके साथ कई फोटोग्राफ लिए जो मेरे पास एक अनूठी धरोहर के रूप में हैं। जब भी उनके पास पत्र भेजा गया उसका उत्तर देते थे। मेर परिवार में तीन पुत्रियां एवं एक पुत्र है। दो पुत्रियों का विवाह हो चुका है। उनके शुभ विवाह के भेजे गए कार्ड के उत्तर में उनके द्वारा दोनों को भावी जीवन के प्रति शुभाशीष के साथ भेजा गया एक पत्र मेरे पास यादगार के रूप में सुरक्षित है। ये सब उदाहरण उनकी सहृदयता को दर्शाते हैं। मुझे लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रवेश परीक्षा लेने हेतु जाने का कई बार अवसर प्राप्त हुआ। उनसे मिलने उनके निवास (इन्दिरा नगर) पर गया। लौटते समय उनके द्वारा उस कालोनी के बस स्टैण्ड तक छोड़ने आना, तमाम तरह की हिदायतें देना, जब तक मैं बस में बैठ नहीं गया तब तक रुके रहना एवं बस के चलते समय उनकी आंखों में छाया विछोह रूपी वात्सल्य आज भी याद आता है। ऐसा लग रहा था जैसे एक पिता अपने पुत्र को छोड़ने आया था।

उनके साथ वर्षों तक कार्य करने पर उनके कुछ गुणों का समावेश मुझमें हो गया। आज के युवकों में ये गुण उतना महत्व नहीं पा रहे हैं। मैं भी यद्यपि कोई बहुत बड़ा पद नहीं प्राप्त कर पाया पर उनकी कार्यशैली के अंतर्गत कार्य करने से जो सुख एवं संतोष का अनुभव हुआ है वह अतुलनीय है।

मैं डॉ0 साहब की दीर्घायु की कामना करता हूं।

पंडित रविशंकर शुक्ला विश्वविद्यालय
रायपुर-492010

सुखद आश्चर्य

प्रो0 देवेन्द्र शर्मा ने बताया कि वर्ष 1969 में आयोजित गोरखपुर विश्वविद्यालय के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल तथा विश्वविद्यालय के कुलाधिपति श्री गोपाल रेड्डी (आन्ध्र प्रदेश, तेलुगु भाषी) विश्वविद्यालय के कुलपति रेवरेंड पी.टी. चांडी (केरल, मलयालम भाषी) तथा प्रोफेसर ए.एल. बैशम, लंदन विश्वविद्यालय (ब्रिटेन, अंग्रेजी भाषी) उपस्थित थे। इन तीनों अहिन्दी भाषी विद्वानों ने उक्त अवसर पर अपने दीक्षान्त भाषण विशुद्ध हिन्दी भाषा में दिए। सभी उपस्थित श्रोताओं के लिए यह एक सुखद आश्चर्य था।

– देवव्रत द्विवेदी

सौम्य मूर्ति प्रो० देवेन्द्र शर्मा

डॉ० श्रवण कुमार तिवारी

दुर्बल देहयष्ठि किन्तु प्रबल मनोबल वाले, गौर वर्ण, लंबे, सौम्य मूर्ति तथा विद्या, विनय एवं वय के भार से किंचित झुके हुए प्राध्यापक डॉ0 देवेन्द्र शर्मा को भारतीय विज्ञानविदों के किसी भी समुदाय में सरलता से पहचाना जा सकता है। प्रो0 शर्मा एक माने जाने शिक्षक तथा लब्धप्रतिष्ठ शोधकर्ता रहे हैं, और कई वर्षों पूर्व अवकाश प्राप्त कर चुके हैं, परन्तु उनके भीतर का शिक्षक एवं शोधार्थी आज भी जीवन्त है, इन दोनों क्षेत्रों में, लगता है अभी वे वृद्ध नहीं हुए हैं। उनसे मेरा परिचय अत्यंत पुराना है, लगभग पैंतीस वर्ष पुराना, और वह भी गुरु शिष्य के रूप में।

प्रो0 शर्मा से मेरा परिचय, जहां तक मुझे याद है, छठे दशक के अंत में गोरखपुर विश्वविद्यालय में हुआ था। उन दिनों वे वहां भौतिकी विभाग के अध्यक्ष थे। तब मैं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भौतिकी कक्ष, हिन्दी प्रकाशन में सहायक निदेशक के पद पर कार्यरत था और यह विभाग एक अस्थायी योजना के अन्तर्गत चल रहा था। अतः मैंने स्थायी वृत्ति की तलाश के सिलसिले में देविरया जनपद के एक महाविद्यालय में प्राचार्य पद के लिए आवेदान किया था। शर्मा जी उस महाविद्यालय के प्रबंधक महोदय से परिचित थे और मेरे शिक्षागुरु प्रो0 नन्दलाल सिंह जी शर्मा जी से घनिष्ठतापूर्वक परिचित थे। अतएव मैं प्रो0 नन्दलाल सिंह से एक पत्र लेकर प्रो0 शर्मा से मिलने गोरखपुर विश्वविद्यालय गया।

मेरे एक मित्र से पता लगा कि प्रो0 शर्मा एक प्रतिष्ठित शिक्षक हैं परन्तु अत्यंत अनुशासनप्रिय एवं 'सख्त' मिजाज़ के व्यक्ति हैं (तात्पर्य यह कि तथाकथित 'सोर्स सिफारिश' को पसन्द नहीं करते हैं)। मुझे इस बात से कोई असुविधा की आशंका नहीं हुई, क्योंकि प्रो0 शर्मा से मिलने का मेरा अभिप्राय यह नहीं था कि वे मेरी नियुक्ति करा दें, मेरा विचार मात्र यह था कि प्रो0 शर्मा के माध्यम से मैं अपनी शैक्षिक, सामाजिक एवं व्यावहारिक योग्यता की प्रामाणिक एवं विश्वसनीय जानकारी प्रबंधक महोदय को दे सकूंगा। मैंने शर्मा जी के कक्ष का द्वार खटखटाया और अनुमति पाकर भीतर गया। ज्योंही वे मेरी ओर मुख़ातिब हुए, मैंने नमस्कार करके गुरु जी का पत्र उन्हें थमा दिया। मैं चुप खड़ा रहा। ज्योंही शर्मा जी ने पत्र खोला और प्रो0 नन्दलाल सिंह का नाम देखा, वे उठ खड़े हुए, मुझसे हाथ मिलाया, सबका कुशलक्षेम पूछा और मुझे बैठा कर पत्र पढ़ा। तदन्तर मुझसे भी बातें कीं और एक पत्र प्रबंधक महोदय के लिए लिख कर मुझे दिया। उन्होंने मुझे साक्षात्कार से पर्याप्त समय पूर्व उस पत्र के साथ प्रबंधक जी से मिलने का निर्देश भी दिया। हालांकि, उन्होंने संकेत कर दिया कि वहां किसी और की नियुक्ति पूर्वनिर्धारित है।

स्पष्ट है कि मैं उक्त 'अवसर' प्राप्त नहीं कर सका था। परन्तु प्रो0 शर्मा का दर्शन और उनसे बातचीत करने का सुयोग मेरे लिए अत्यंत प्रेरणाप्रद रहा। मैंने वाराणसी आकर गुरु जी को सब वृत्तान्त बताया। तब से जब भी प्रो0 शर्मा वाराणसी आते, प्रो0 सिंह के घर पर आते या विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में आते, उनसे मिलने का अवसर प्रायः मिला करता था। मेरा गांव गोरखपुर जनपद में ही है अतः जब भी गोरखपुर जाने का अवसर मिलता, मैं प्रो0 शर्मा से मिलने का प्रयास अवश्य करता था। प्रो0 शर्मा का शोधकार्य रश्मि विज्ञान (स्पेक्ट्रोस्कोपी) के क्षेत्र में था और मैं भी स्पेक्ट्रोस्कोपी का ही शोधछात्र था। भौतिकी कक्ष में कार्य करते हुए मैं स्पेक्ट्रोस्कोपी विभाग का0हि0 विश्वविद्यालय में भी कुछ प्रयोग करता रहता था, अतः शर्मा जी से मिलने पर उनसे कुछ न कुछ नया सीखने

या सुनने का अवसर मिलता था।

बाद में शर्मा जी गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति हो गए और आगे चलकर वे इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति रहे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में प्रायः वैज्ञानिक गोष्ठियों तथा लब्धप्रतिष्ठ वैज्ञानिकों के व्याख्यान भी आयोजित होते रहते हैं। प्रो0 शर्मा के भी कुछ व्याख्यान ऐसी संगोष्ठियों में सुनने को मिलते थे। शिक्षक के रूप में प्रो0 शर्मा को गोरखपुर विश्वविद्यालय के छात्रों एवं अध्यापकों का बड़ा सम्मान प्राप्त था। सब लोग, विशेषतः उनके प्राचीन छात्र उनकी प्रशंसा करते हैं।

प्रो0 शर्मा अत्यंत मृदुभाषी एवं विनम्र हैं, परन्तु अनुशासनिक एवं प्रशासनिक मामलों में वे अपनी विनम्रता को आड़े नहीं आने देते हैं। बातचीत में वे अत्यंत संयत हैं। मैंने कभी उन्हें निरर्थक बातचीत करते नहीं सुना है। वे अनेक समितियों के सदस्य या अध्यक्ष भी रहे हैं। वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की कुछ जांच समितियों के अध्यक्ष तथा कार्यकारिणी के सदस्य भी रहे हैं परन्तु गोपनीयता वर्तन के संदर्भ में शायद ही कोई उनकी बराबरी कर सकता है। आचार और व्यवहार में शर्मा जी एक आदर्श ब्राह्मण हैं, मात्र जाति ब्राह्मण नहीं। उनकी वेशभूषा, उनका खान पान, सब अति सरल और युक्तियुक्त है। जैसा कि गीता में कहा गया है–

युक्ताहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
युक्त स्वप्नावबोधस्य योगोभवति दुःखहा।।

हिन्दू विश्वविद्यालय के भौतिकी कक्ष में अनेक वर्षों तक राष्ट्रभाषा हिन्दी में भौतिक विज्ञान की पुस्तकों के मौलिक लेखन, अनुवाद तथा संपादन का कार्य करते रहने के कारण मुझे हिन्दी विज्ञान लेखन में अभिरुचि हो गई अतः मैं विज्ञान परिषद् प्रयाग का सदस्य बना तथा यहां अनेक वैज्ञानिक शिक्षकों को प्रोत्साहित करके परिषद् की काशी हिन्दू विश्वविद्यालय शाखा का गठन किया। अतएव विज्ञान परिषद् द्वारा आयोजित संगोष्ठियों में इलाहाबाद जाने का अवसर मिलता रहा। प्रो0 शर्मा विज्ञान परिषद् के पुराने सदस्य और 'विज्ञान' के सम्पादक भी रह चुके थे। कुछ संगोष्ठियों में उनसे मिलने और वैज्ञानिक विषय पर उनका हिन्दी व्याख्यान भी सुनने को मिला।

भौतिकी कक्ष से मैंने सन् 1994 में अवकाश ग्रहण किया। पर लिखने की प्रवृत्ति जागरूक थी अतः मैंने अपने मित्र प्रो0 डी0के0 राय (देवेन्द्र कुमार राय) के सहयोग से 'लेसर और उसके उपयोग' शीर्षक से एक पुस्तक लिखी जो अक्टूबर 1997 में प्रकाशित हुई। इससे लगभग एक वर्ष पूर्व नवम्बर सन् 1996 ई0 में प्रो0 नन्द लाल सिंह का देहावसान हो गया था। उनकी हिन्दी सेवाओं की स्मृति बनाए रखने के लिए उनके सुयोग्य पुत्रों ने अपेक्षित धनराशि प्रदान करके विज्ञान परिषद प्रयाग के तत्वावधान में 'प्रो0 नन्दलाल सिंह स्मृति व्याख्यानमाला' का कार्यक्रम आरंभ करवाया। इस व्याख्यानमाला का प्रथम व्याख्यान प्रो0 देवेन्द्र शर्मा ने दिया था और इसका आयोजन परिषद् की काशी हिन्दू विश्वविद्यालय शाखा द्वारा भौतिकी विभाग में किया गया। प्रो0 शर्मा ने अपने रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक व्याख्यान से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। इन कार्यक्रमों के दौरान शर्मा जी से मिलने के अनेक अवसर मिले। मैंने अपनी पुस्तक की समीक्षा लिखने का उनसे आग्रह किया और उन्होंने लिखा भी। यह समीक्षा 'विज्ञान' में प्रकाशित भी हुई। उन्हीं ने हमें इस पुस्तक को केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय तथा उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान में पुरस्कार के लिए विचारार्थ भेजने का सुझाव दिया था और इस पर, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, शिक्षा विभाग, भारत सरकार का वर्ष 1998–99 का 'शिक्षा पुरस्कार' प्राप्त हुआ।

प्रो0 शर्मा एक सुयोग्य शिक्षक, लब्धप्रतिष्ठ शोधकर्ता एवं आदर्श नागरिक हैं परन्तु उनके व्यवहार में न तो कहीं कोई कृत्रिमता परिलक्षित होती है, न ही किसी प्रकार का दम्भ। वे सर्वतोभावेन अनुकरणीय विनम्रता की साक्षात् मूर्ति हैं। उन्हें देखकर, उनसे मिलकर तथा उनकी मृदु वाणी का श्रवण कर निम्नलिखित सुभाषित सूक्ति स्वतः याद आ जाती है–

भवन्ति नम्राः तरवः फलोद्गमैः
नवाम्बुभिः भूरि विलंबिनोघनाः
अनुद्धता सत्पुरुषा समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्।।

अवकाशप्राप्त सहायक निदेशक
भौतिकी कक्ष, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी-5

परम आदरणीय गुरुवर प्रो० देवेन्द्र शर्मा के साथ की कुछ स्मृतियां

डॉ० राम सागर

मेरा सम्बन्ध प्रो0 देवेन्द्र शर्मा से सदैव गुरु–शिष्य का रहा है। मेरे लिए प्रो0 शर्मा एक ऐसे आदर्श गुरु हैं जो कर्मठ, सन्यासी होने के साथ साथ विश्व के प्रसिद्ध स्पेक्ट्रोस्कोपी वैज्ञानिक हैं। प्रो0 शर्मा से सर्वप्रथम मेरा सम्पर्क 1971 में उस समय हुआ जब मैंने गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी विषय में स्नातकोत्तर छात्र के रूप में प्रवेश लिया। वह उन दिनों भौतिकी के विभागाध्यक्ष थे। विज्ञान संकाय में स्नातकोत्तर कक्षाओं में पठन पाठन समेस्टर पद्धति के अनुसार होता था। विभागाध्यक्ष के रूप में व्यस्त होने के बावजूद भी प्रो0 शर्मा छात्रों को पढ़ाने में अत्यधिक समय व्यतीत करते थे। स्वयं एक स्पेक्ट्रोस्कोपी विशेषज्ञ एवं प्रसिद्ध वैज्ञानिक होने के उपरान्त भी, भौतिकी विषय की अन्य शाखाओं में रुचि रखना एवं पढ़ाना, प्रो0 शर्मा की दिनचर्या में था। इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि गोरखपुर विश्वविद्यालय में खगोल विज्ञान को भौतिकी विषय की एक शाखा के रूप में विकसित करने एवं इसमें शोधकार्य को बढ़ावा देने में प्रो0 शर्मा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

1971 के प्रथम सेमेस्टर में उन्होंने हम लोगों को क्वान्टम मिकैनिक्स पढ़ाया। उनके पढ़ाने की शैली में भौतिकी के मूलभूत सिद्धान्तों को समझाना प्रमुख हुआ करता था। लम्बे लम्बे गणितीय समीकरणों को कक्षा में डिराइव करने के स्थान पर इनकी स्टेन्सिल बनाकर सभी विद्यार्थियों को बांट देते थे एवं कक्षा में उनको डिराइव करने की बारीकियों एवं भौतिकी के सिद्धान्तों पर अत्यधिक जोर देते थे। समय से कक्षा में आना एवं कक्षा के समय का महत्तम् उपयोग करने हेतु प्रो0 शर्मा एक उदाहरण के रूप में अनुकरणीय रहे। उनकी अपेक्षा रहती थी कि विद्यार्थी अनुशासन के साथ ध्यान से उनके व्याख्यानों को सुनें। इसका प्रमाण निम्न घटनाक्रम से मिलता है।

प्रो0 शर्मा ने क्वान्टम मेकैनिक्स के लम्बे समीकरणों के स्टेन्सिल विद्यार्थियों को दशहरे के अवकाश के एक दिन पूर्व वितरित किए। संयोगवश अवकाश के बाद प्रथम ही दिन प्रो0 शर्मा के उसी विषय की कक्षा थी। उन्होंने पूछा कि कितने लोग पिछली बार दी गई स्टेन्सिल ले आए हैं। यह पाया गया कि आधे से ज्यादा विद्यार्थी नहीं लाए थे। इस बात पर उन्होंने गहरा असंतोष व्यक्त किया एवं इससे विद्यार्थियों को होने वाले नुकसानों के बारे में भी विस्तार से बताया।

प्रो0 शर्मा के न्यायसंगत होने का एक संस्मरण मुझे चिरस्मरणीय रहा है। 1973 में प्रथम बार स्नातकोत्तर (अन्तिम वर्ष) भौतिकी विषय की सभी स्पेशलाइजेशन्स की प्रयोगात्मक परीक्षा एक संयुक्त परीक्षक बोर्ड से करायी गई। इसका प्रमुख कारण यह था कि इससे पूर्व सभी 6 स्पेशलाइजेशन्स की प्रयोगात्मक परीक्षाएं अलग अलग होती थीं जिससे कभी कभी स्पेशलाइजेशन्स के विद्यार्थियों को तुलनात्मक दृष्टि से प्रयोगात्मक परीक्षाओं से ज्यादा या कम नम्बर प्राप्त होते थे। संयुक्त परीक्षक बोर्ड बन जाने के बाद भी परीक्षक संयुक्त रूप से सभी विद्यार्थियों का मूल्यांकन करते हैं। फलस्वरूप विसंगति

उत्पन्न होन की आशंका कम हो जाती है। सम्भवतः इसी कारण से यह प्रक्रिया आज भी लागू है।

मुझको खगोल विज्ञान में एक शोधकर्ता के रूप में अपना कैरियर चुनने में प्रो0 शर्मा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। घटनाक्रम कुछ इस प्रकार है—

स्नातकोत्तर भौतिकी (अन्तिम वर्ष) के चतुर्थ सेमेस्टर की प्रयोगात्मक परीक्षा जून 1973 में सम्पन्न हुई। खगोल विज्ञान के वाह्य परीक्षक डॉ0 एस.डी. सिंघल, निदेशक, उत्तर प्रदेश राजकीय वेधशाला, नैनीताल थे। प्रयोगात्मक परीक्षाओं की समाप्ति पर डॉ0 सिंघल ने दो विद्यार्थियों को, जिसमें मैं भी सम्मिलित था, वेधशाला नैनीताल में शोध छात्र के रूप में कार्य करने के लिए आमन्त्रित किया। स्नातकोत्तर परीक्षा का परिणाम घोषित होने पर, मैं प्रो0 शर्मा से संस्तुति लेकर जुलाई 1973 में वेधशाला, नैनीताल आया और खगोल विज्ञान में शोधकर्ता के रूप में अपना जीवन प्रारम्भ किया। इसी उपक्रम में मुझको एक बार पुनः प्रो0 शर्मा के साथ एक शिष्य के रूप में कार्य करने का अवसर मिला। प्रो0 शर्मा एवं डॉ0 सिंघल के संयुक्त निर्देशन में मैंने अपना शोध निबन्ध 1979 में पूरा किया एवं पी.एचडी. की उपाधि 1981 में गोरखपुर विश्वविद्यालय से प्राप्त की। प्रो0 शर्मा की शोधकार्यों में रुचि उनके जीवन का अभिन्न अंग रही है। इसका उदाहरण इस तथ्य से मिलता है कि जब मैं अपने शोध निबन्ध को अंतिम रूप दे रहा था तो प्रो0 शर्मा कुलपति थे। प्रथम, गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर में, पुनश्च देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर में। प्रो0 शर्मा से अपने शोध निबन्ध पर मार्गदर्शन प्राप्त करने हेतु मैंने इन्दौर में लगभग दो सप्ताह का प्रवास किया। अपने व्यस्त कार्यक्रमों में से प्रो0 शर्मा ने पर्याप्त समय निकालकर मुझको शोध निबन्ध पूर्ण करवाने में बहुमूल्य मार्गदर्शन किया। इसी दौरान मुझको श्रीमती शर्मा, जिनको मैं माता जी कहकर सम्बोधित करता हूँ, के ममत्व एवं वात्सल्य का अनुभव प्रथम बार हुआ।

प्रो0 शर्मा अभी भी शोध कार्यों एवं हिन्दी में विज्ञान के प्रचार एवं प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। उन्होंने, अप्रैल 1977 में नैनीतात में आयोजित 'एस्ट्रोनामी विद माडरेट साइज ऑप्टिकल टेलिस्कोप' नामक अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक गोष्ठी में 'टेलिस्कोप एवं स्पेक्ट्रोस्कोप' विषय पर एक आमन्त्रित व्याख्यान दिया जिसको गोष्ठी में उपस्थित विद्वानों ने काफी सराहा। यह लेख 1998 की एस्ट्रोनामिकल सोसाइटी ऑफ इण्डिया की बुलेटिन सं0 26 के पृष्ठ 403–405 पर प्रकाशित किया गया। 1998 में ही विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका सं0 41 में पृष्ठ 1 से 10 पर आपका 'स्पेक्ट्रोस्कोप की आँख से (अवनि से अन्तरिक्ष के परे तक)' नामक लेख भी प्रकाशित हुआ है। इस महान एवं विश्वविख्यात लब्ध वैज्ञानिक के बारे में कितने ही पन्ने लिखे जा सकते हैं।

संक्षेप में प्रो0 शर्मा एक मृदुभाषी एवं सहज परन्तु सिद्धान्तों पर चट्टान की तरह अडिग रहने वाले व्यक्ति हैं। मैं इनके स्वस्थ एवं दीर्घायु होने की परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ ताकि भविष्य में भी वे अनेक लोगों के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण के रूप में कार्य कर विज्ञान के उत्थान में महत्वपूर्ण योगदान दे सकें।

निदेशक
राजकीय वेधशाला
मनोरापीक-263219, नैनीताल
एवं
भारतीय तारा भौतिकी संस्थान
बंगलौर-560034

अद्भुत व्यक्तित्व के धनी प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा

डॉ० के.एन. उत्तम

संसार में ऐसे विरले व्यक्ति होते हैं जिनसे बार बार मिलने का मन करता है। प्रश्न उठता है क्यों ? किसी की सादगी, किसी की विद्वता और किसी के विचार प्रभावित करते हैं। प्रो0 शर्मा में ये सभी गुण एक साथ विद्यमान हैं। जिन व्यक्तियों के व्यक्तित्व को देखकर कुछ सीखा जा सकता है उनमें से एक हैं मूर्धन्य विद्वान प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा।

वैसे मैं न तो प्रोफेसर शर्मा से कभी व्यावहारिक रूप से जुड़ा रहा, न ही उनका विद्यार्थी रहा। अलबत्ता एम.एससी. (पूर्वार्द्ध, भौतिकी) में वाह्य परीक्षक के रूप में आये थे। परीक्षा में मुझे दिष्टकारी (रेक्टीफायर) नामक प्रयोग मिला था, जिसका उपकरण कतिपय कारणों से खराब था। खराब उपकरण होने के कारण विद्युतमीटर में धारा विक्षेप स्थिर नहीं हो पा रहा था। सम्भवतः प्रतिरोध का संपर्क ठीक नहीं था जिसके कारण धारा एवं विभवान्तर का मान बार बार बदल रहा था। संबंधित आंतरिक परीक्षक से मैंने अपनी समस्या बताई परन्तु उन्होंने यह कहकर कि कल उपकरण ठीक था, आज कैसे खराब हो गया, सुनी अनसुनी कर दी। प्रोफेसर शर्मा जब मेरा 'वाइवा' लेने आए तो उन्होंने इस प्रयोग में हो रहे धारा एवं विभवान्तर परिवर्तनों को गौर से देखा। सैद्धान्तिक भौतिकी से संबंधित लगभग सभी प्रश्नों का उत्तर सही पाने के बाद उनका एक कथन मुझे मर्माहत कर गया। उन्होंने कहा कि तुम सैद्धान्तिक भौतिकी में अच्छे हो पर प्रयोगात्मक भौतिकी में कमजोर। तुम्हें प्रयोगात्मक भौतिकी में कड़ी मेहनत करनी चाहिए। मुझे प्रयोगात्मक परीक्षा में बहुत कम अंक मिले। परीक्षाफल देखने के बाद मुझे ऐसा लगा कि मुझे प्रयोगात्मक भौतिकी सीखनी चाहिए। मैंने निश्चय किया कि मैं उसी विषय में, जिसमें प्रो0 शर्मा ने अध्ययन एवं शोधकार्य किया है, प्रयोगात्मक कार्य करूंगा। मेरे दृढ़ निश्चय ने मुझे एम.एससी. (उत्तरार्ध भौतिकी) में स्पेक्ट्रोस्कोपी ऐच्छिक विषय में कार्य करने के लिए प्रेरित किया और मैंने स्नातकोत्तर उत्तरार्ध की परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त किए।

मेरे सीखने का क्रम यहीं तक सीमित नहीं रहा। प्रो0 शर्मा के प्रथम शोध विद्यार्थी एवं इलाहाबाद में भौतिकी के प्रोफेसर मुरली मनोहर जोशी के निर्देशन में मैंने अपना शोधकार्य शुरू किया। यह महज संयोग की बात है कि प्रो0 शर्मा पुनः मेरी डी.फिल डिग्री के वाह्य परीक्षक भी नियुक्त हुए। जिस व्यक्ति के व्यक्तित्व की प्रेरणा से मैंने शोधकार्य शुरू किया था, जब वही व्यक्ति पुनः परीक्षक के रूप में मेरे सम्मुख उपस्थित हुए तो अपनी भावनात्मक खुशी को मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर सका। आदरणीय गुरुवर प्रो0 मुरली मनोहर जोशी जी ने कहा कि "शर्मा जी बड़े ही अनुशासनप्रिय एवं कर्मठ व्यक्ति हैं, अपना विषय अच्छी तरह से तैयार करना। विषयगत अध्ययन में वाइवा के समय मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सकूंगा।" प्रोफेसर शर्मा ने मेरे शोध प्रबन्ध के परीक्षण एवं डी.फिल. वाइवा के उपरांत कहा था "तुम्हारे प्रायोगिक हाथ अच्छे हैं। भविष्य में तुम अच्छा शोधकार्य कर सकते हो, इसे बंद मत करना। वैसे तुम्हें सैद्धान्तिक भौतिकी का अच्छा ज्ञान है और दोनों साथ साथ करना।" इसके बाद अध्ययन एवं

अध्यापन को मैंने अपना कार्यक्षेत्र चुना। बाद के दिनों में प्रो0 शर्मा प्रायः मुझे स्पेक्ट्रोस्कोपी की राष्ट्रीय संगोष्ठियों में मुख्य वक्ता अथवा मुख्य अतिथि के रूप में मिलते रहे। समय समय पर मैं उनसे विषय से सम्बद्ध वार्तालाप करता रहा और अब भी अवसर मिलने पर करता रहता हूं। मैंने पाया कि प्रोफेसर शर्मा शोधकार्य में सदैव आधारभूत (फंडामेंटल) कार्य के समर्थक हैं। शोधपत्र छोटा हो, परन्तु उसका सारगर्भित होना उनकी पसंद है। वार्तालाप के दौरान मैंने देखा कि उनमें आधारभूत ज्ञान की विषयगत समझ अत्यधिक है। प्रायः वे सम्बन्धित विषय के पहलुओं पर वार्तालाप करते रहते हैं जिससे उनके साथ बैठकर कुछ नया सीखने को मिलता रहता है। गूढ़ से गूढ़ विषय को वे सरल एवं स्पष्ट शब्दों में प्रस्तुत करने की कला में माहिर हैं।

प्रो0 शर्मा इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में प्रायः किसी न किसी रूप में आते रहते हैं। कभी वे विद्यार्थियों के लिए आयोजित व्याख्यानमालाओं में विशिष्ट वक्ता के रूप में, कभी परीक्षक के रूप में और कभी कभी इलाहाबाद की चयन समितियों में विशेषज्ञ के रूप में सम्मिलित होने के बाद अपने पुराने मित्रों से मिलने के बहाने। विद्यार्थियों के लिए प्रो0 शर्मा सदैव एक अध्यवसायी, ईमानदार एवं परिश्रमी तथा स्पष्ट छवि वाले अध्यापक के रूप में जाने जाते हैं।

मैं उनकी एक विशिष्ट शैली से अत्यधिक प्रभावित हुआ हूं जिसका उल्लेख करना चाहूंगा। प्रो0 शर्मा एम.एससी. स्पेक्ट्रोस्कोपी की प्रयोगात्मक परीक्षा में वाहय परीक्षक के रूप में आए हुए थे। विद्यार्थियों से वाइवा के दौरान कई तरह के सैद्धान्तिक पक्षों के साथ साथ प्रयोगात्मक पक्षों पर विषयगत सवाल पूछे जाते हैं। सम्भवतः परीक्षा के मानसिक दबाव के कारण प्रायः विद्यार्थी आशानुकूल प्रश्नोत्तर नहीं दे पाते हैं। प्रो0 शर्मा प्रत्येक विद्यार्थी से लम्बे समय तक प्रश्न पूछते रहते हैं जिससे छात्र को यह न लगे कि उस विषय के प्रतिपादन हेतु पर्याप्त समय नहीं दिया गया। कभी कभी विद्यार्थी वाइवा परीक्षा के समय घुमा फिराकर उत्तर देता है। प्रो0 शर्मा ऐसे विद्यार्थियों से सदैव एक निश्चित विषय पर प्रश्न पूछते हैं। विद्यार्थी के मौन अथवा गलत जवाब पर प्रायः पूछते हैं कि पढ़कर आए हो या नहीं ? यदि विद्यार्थी का उत्तर हुआ कि श्रीमान मैं अमुक कारण से इस समय पढ़ नहीं सका तो उसे पर्याप्त समय पढ़ने के लिए तथा पुस्तक मंगा कर देते हैं। पुस्तक पढ़ने के बाद वे पुनः उस विद्यार्थी से उसी पढ़े गए विषय पर सवाल पूछते हैं और उसके अनुसार छात्र का मूल्यांकन करते हैं। एक बार मैंने उनसे पूछा कि आप ऐसा क्यों करते हैं ? परीक्षा के समय किसी विद्यार्थी को पुस्तक पढ़ाकर फिर प्रश्न पूछना क्या उचित है ? उनका सहज उत्तर था कि जब छात्र यह कह रहा है कि मैं इसे इस समय पढ़कर नहीं आया और अन्य प्रश्नों का समुचित उत्तर नहीं दे सकता तो उसके मानसिक धरातल का अनुमान केवल इसी तरह से लगाया जा सकता है। यदि यह छात्र इस समय पढ़कर इस विषय को ठीक से समझा सकता है तो कालान्तर में कोई भी विषय मिल जाएगा, पढ़कर या स्वाध्याय से यह विद्यार्थी अच्छा कर लेगा। ऐसा करने से इसके मन में अध्ययन की प्रवृत्ति जन्म लेगी जो किसी भी परीक्षार्थी के भविष्य के लिए आवश्यक है।

डॉ0 शर्मा इलाहाबाद के कई चयन बोर्डों जैसे माध्यमिक चयन बोर्ड, उच्च शिक्षा आयोग, लोक सेवा आयोग, कर्मचारी चयन आयोग एवं विषय विशेषज्ञ के रूप में सम्मिलित होने के लिए लखनऊ से ट्रेन द्वारा इलाहाबाद पहुंचते हैं। मुझे कई बार उनको स्टेशन से लाकर अतिथि गृह तक छोड़ना होता है। ऐसे अवसरों पर वे कभी भी किसी भी परिचित व्यक्ति के यहां नहीं ठहरते रहे हैं। चयन समिति समाप्त होने पर प्रायः वे डॉ0 मुरली मनोहर जोशी के घर पर ठहरते हैं परन्तु चयन समिति के पूर्व वे किसी भी व्यक्ति को इसके बारे में कोई सूचना नहीं देते हैं। रेल के जिस भी दर्जे में वे यात्रा करते हैं, उसी का यात्रा भत्ता एवं यात्रा किराया लेते हैं। उच्च आदर्शों के मानदण्डों में प्रो0 शर्मा के ये आदर्श अनुकरणीय रहे हैं।

प्रवक्ता, भौतिकी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

मान ते ज्ञान नासहिं बेगि

प्रो० देवेन्द्र शर्मा

शिवगोपाल जी से यह जानकर कि विज्ञान परिषद् मेरे सम्मान में 'विज्ञान' का विशेषांक निकालने जा रहा है, मुझे आश्चर्य मिश्रित संकोच हुआ। अनायास 'मानस' की ये पंक्तियां याद (रा.च.मा. 3–21) आती हैं

'विद्या बिनु विवेक उपजाएं।
श्रम फल पढ़े किएं अरू पाएं।।
संग तें जती, कुमंत्र ते राजा।
मान ते ज्ञान, पान ते लाजा।।
प्रीति प्रनय बिनु, मद ते गुनी।
नासहिं बेगि नीति अस सुनी।।

तब मान (सम्मान) से यदि मेरे पास कोई ज्ञान हो तो वह विनाश को प्राप्त हो रहा है। इतना ही नहीं, जब मिश्र जी ने मुझसे संस्मरण लिखने को कहा तो इस अज्ञानी की विद्या भी विवेकहीन हो गई। अतः अविवेकी कुछ अटपटी पंक्तियां लिखने भर की चेष्टा ही कर सकता है।

शिक्षा, समाज, सुधार, ग्राम्य विकास तथा अपने अपने स्तर पर स्वतंत्रता संग्राम में रत (जिसमें मां सक्रिय थीं) उदार दृष्टिकोण वाले परिवार में मेरा जन्म और भरणपोषण हुआ। सौभाग्य से स्कूल में जो शिक्षक मिले वे विषय के मूलभूत तथ्यों के साथ उनकी बारीकियों को समझाने के अतिरिक्त अन्य आयामों में झांकने की प्रेरणा भी देते थे। हाईस्कूल में भौतिकी पढ़ाते समय हमारे गुरुजी ने सामान्य अवलोकन सम्बन्धी एक प्रश्न पूछा जिसका 35 छात्रों की कक्षा में केवल तीन ने सही उत्तर दिया। गुरुदेव की टिप्पणी थी, "बहुमत मूर्खों का है।" चाहे शिक्षक हों या घर का वातावरण, किसी समस्या का हल या समाधान ढूंढने में स्वयं चेष्टा या प्रयास करने पर बल दिया। इसके अतिरिक्त पारिवारिक पुस्तकालय भी जिज्ञासा को उबारने या शान्त करने में सहायक रहा। स्कूल के बाद की शिक्षाएं भी अपने पिताजी तथा इलाहाबाद विश्वविद्यालय के वातावरण ने सीमित साधनों से सफलता पाने की प्रेरणा दी। सहसा वह दिन याद आता है जब यह निश्चित करना था कि एम.एससी. करने के बाद आगे क्या करना है। अधिकांश सम्बन्धी प्रशासनिक सेवा के पक्षधर थे, परन्तु वह कार्य मुझे रुचिकर नहीं लगता था। पिताजी ने निर्णय मुझ पर छोड़ दिया तथा मेरे शिक्षा और शोध चुनने पर वे प्रसन्न हुए।

मैं जुलाई 1941 में पुनः इलाहाबाद पहुंच गया। द्वितीय विश्व युद्ध अपने शिखर पर था, उपकरणों आदि का आयात सम्भव नहीं था। अतः जो साधन विभाग में उपलब्ध थे उन पर ही निर्भर रहना तथा विभागीय कार्यशाला और अपने बूते पर ही काम करना था, यहां तक कि जब विशेष प्रकार की फोटोग्राफिक प्लेटों की आवश्यकता पड़ी तो वे भी स्वयं बनाई। संक्षेप में, उचित साधनों के अभाव में वांछित आवश्यकताओं की पूर्ति के मार्ग मिल ही जाते हैं जिनसे व्यक्ति बहुत कुछ सीखता है।

सन् 1944 की जुलाई में विक्टोरिया रीडरशिप की अवधि समाप्ति के बाद से जून 1946 में डी.फिल. की थीसिस जमा करने तक मैं आचार्य के.एस. कृष्णन के शोध सहयोगी के रूप में कार्यरत रहा। साथ ही नेशनल एकेडमी आफ साइन्सेज के विशेष कार्य अधिकारी (ओ.एस.डी.) का कार्यभार भी संभाला। इस काल का अनुभव आगे जीवन के ढालने में अत्यन्त

उपयोगी रहा। सन् 1942 में वैज्ञानिक विषयों का हिन्दी में प्रस्तुतीकरण प्रारम्भ किया था। वह भी चलता रहा। आम नागरिक को वैज्ञानिक साहित्य से परिचित कराने के अतिरिक्त उसको वैज्ञानिक दृष्टिकोण में निष्णात करने के लिए यह आवश्यक था और आज भी है। यदि विषय को मातृभाषा के माध्यम से आत्मसात कर लिया जाए तो जिज्ञासु अन्य भाषा (जिसमें वह प्रवीण भी नहीं है) में उपलब्ध साहित्य से भी अपने ज्ञान का विस्तार कर सकता है। इसका विपर्यय भी सत्य है। अब से आधी शताब्दी पूर्व जब स्नातक स्तर का लगभग सम्पूर्ण वैज्ञानिक साहित्य यहां अंग्रेजी में ही उपलब्ध था और अध्यापन भी उसी भाषा में होता था तब मेरे अनुज अशोक ने हम सबको बिना पहले से बताए बी.एससी. के प्रश्नपत्रों के उत्तर सराहनीय सफलता के साथ हिन्दी में लिखे।

प्रवक्ता का दायित्व संभालने के लगभग ढाई वर्ष बाद की एक घटना याद आती है जब शीतकालीन अवकाश प्रारम्भ होने के कुछ दिन पूर्व अपरान्ह मेरे गुरु विभागाध्यक्ष ने मुझे बुलाकर कहा कि क्योंकि जो सज्जन स्नातकोत्तर अन्तिम वर्ष में न्यूक्लिअर भौतिकी पढ़ा रहे हैं वे उपलब्ध नहीं रहेंगे अतः शेष विषयवस्तु का अध्यापन जनवरी से सत्रांत तक कर दूं। उनके द्वारा इसके लिए चुने जाने पर मुझे विशिष्ट गौरव का अनुभव हुआ कि उनको मेरी क्षमता पर विश्वास है। इस घटना के लगभग 16 वर्ष बाद की घटना पर मुझे पुनः आश्चर्य हुआ। पाठ्यक्रम में वांछनीय परिवर्तन की दृष्टि से एक सत्र में प्रायः आठ व्याख्यान देने के लिए एक होनहार प्रवक्ता को दायित्व सौंपा गया तो उसने इसे दुर्भावनावश मानते हुए अपनी खीज को ध्वनि (शब्द) देने में संकोच नहीं किया जबकि नए सत्रारम्भ के पूर्व तैयारी के लिए कम से कम तीन मास का समय उपलब्ध था।

सन् 1948 के उत्तरार्ध में कैनेडा की नेशनल रिसर्च काउंसिल (राष्ट्रीय शोध परिषद्) ने अपने नव सृजित उत्तर डॉक्टरेट फेलोशिपों के लिए दुनिया भर से आवेदन आमंत्रित किए। इतने विस्तृत परिक्षेत्र में चयन की संभावना नगण्य होते हुए भी इस भावना से कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय से कोई अभ्यर्थी हो, अनिच्छा से पुनर्मुद्रित शोध पत्रों के साथ निर्धारित फार्म भर कर भेज दिया। अप्रैल 1949 में पत्र आया कि मेरा चयन हो गया है तथा अक्टूबर मास में मैं सपत्नीक ऑटवा के लिए रवाना हो गया। वहां अपने शोध के क्षेत्र में विश्वविख्यात स्पेक्ट्रोस्कोपिस्ट डॉ0 गरहर्ड हर्जबर्ग तथा उनके सहयोगियों और अन्य फेलोज से परस्पर जो सीखा वह अमूल्य है। अन्य प्रयोगशालाओं तथा वेधशालाओं के साथ यर्क्स वेधशाला भी जाने का अवसर मिला जिसे प्रोफेसर चन्द्रशेखर ने स्वयं दिखाया तथा बताया कि उन दिनों के आणवीय स्पेक्ट्रम और संरचना विषय का अध्यापन कर रहे हैं। प्रसंगवश जब 1957 में हर्जबर्ग पहली बार भारत आए तो इलाहाबाद में दो व्याख्यान दिए तथा हमारे घर साथ ही ठहरे।

जिस समय हम कैनेडा गए, ऑटवा में भारतीय केवल उच्चायोग में ही थे। मेरे सपत्नीक होने के कारण हम एक तरह से देश के अनौपचारिक प्रतिनिधि थे और हमारा आचरण भारत का प्रतिनिधित्व करता था। जब कभी लोगों को पता लगता था कि मैं रिसर्च काउंसिल के निमंत्रण पर भारत से आया हूं तो कुतूहलवश वे पूछते थे कि मेरी शिक्षा कहां से हुई है और यह बताने पर कि अपने देश भारत में, तो उन्हें आश्चर्य मिश्रित संतोष होता था कि भारत किसी दृष्टि से पिछड़ा नहीं है। ऑटवा पहुंचने के तीन दिन के भीतर ही हमको श्री दाउद के भवन के तीसरे तल पर दो कमरों का एक स्वतंत्र स्यूट (सेट) मिल गया जो सब साधनों, सुविधाओं और उपकरणों से सुसज्जित था। उसमें हमको केवल अपने पहनने के वस्त्रों तथा अपनी पसन्द की भोजन सामग्री के अतिरिक्त कोई अन्य व्यवस्था नहीं करनी थी। दाउद परिवार का मद्य और धूम्रपान त्यागी होना एक सुखद संयोग था। मेरी पत्नी से लगभग 16–17 वर्ष बड़ी होने के कारण श्रीमती दाउद का महिमा के प्रति बड़ी बहन का सा मधुर स्नेह था। एक बार उनकी एक सहेली ने उनसे साश्चर्य पूछा, "तुमने अनजाने इस विदेशी दम्पत्ति पर विश्वास कैसे कर अपने घर के एक भाग में स्थान दे दिया ?" श्रीमती दाउद का संक्षिप्त उत्तर था, "यह समस्या तो उनके सोचने की थी जो यहां अकेले थे, हमारे साथ तो पूरा देश था।" यह द्रष्टव्य है कि हमको कहीं ताला लगाने की आवश्यकता नहीं महसूस हुई।

हमारे वापस आने के कुछ समय पूर्व भारतीय उच्चायोग के एक सत्कार समारोह में शासन तथा रिसर्च परिषद् के उच्चस्तरीय व्यक्तियों के साथ हम और काउंसिल के निदेशकों सहित मेरे सहकर्मियों के अतिरिक्त येक्शिल विश्वविद्यालय के कुलपति भी थे जिन्होंने हमको अपने यहां की व्यवस्था तथा कार्य प्रणाली देखने के लिए आमंत्रित किया। इस समारोह के तीन चार दिन बाद कैनेडा के चौक रिवर परमाण्विक ऊर्जा प्रतिष्ठान देखने का भी निमंत्रण मिला। उसको दिखाते हुए वहां के अध्यक्ष ने बताया कि संस्थान में कार्यरत वैज्ञानिकों को छोड़कर मैं पहला वैज्ञानिक हूं जो वहां की प्रयोगशाला को देख रहा हूं। यह कहना कि हमारा विदेश प्रवास वैज्ञानिक एवं मानवीय दोनों दृष्टिकोणों से उपयोगी तथा सुखद रहा यह प्रकरण समाप्त कर रहा हूं।

नव स्थापित गोरखपुर विश्वविद्यालय ने जुलाई 1958 से विज्ञान संकाय स्थापित करने का निर्णय लिया तथा मुझे भौतिकी के आचार्य पद के लिए आमंत्रित किया। 2 मई 1958 को कार्यभार संभालने के पूर्व मैंने इलाहाबाद में अपने गुरुजनों तथा सहकर्मियों से परामर्श किया तो सबने सलाह दी कि स्नातक कक्षाएं तो जुलाई से प्रारम्भ हो सकती हैं परन्तु स्नातकोत्तर प्रयोगशालाओं के लिए एक वर्ष की तैयारी चाहिए। गोरखपुर पहुंचने के बाद शासन का लगभग इसी आशय का वह पत्र भी देखने को मिला जिसमें कहा गया कि 'भौतिकी में यदि संभव हो तो जुलाई 1958 से। जब मैंने विस्तृत ब्यौरे के साथ बताया कि किस प्रकार सामान्यतः उपलब्ध तथा विभागीय कार्यशाला एवं स्थानीय सुविधाओं द्वारा निर्मित उपकरणों के द्वारा प्रारम्भ में कम प्रवेशार्थी लेकर जुलाई 1958 तक स्नातकोत्तर स्तर की प्रयोगशाला का श्रीगणेश कर सकते हैं तब किसी को सन्देह नहीं रहा। 16 जुलाई 1958 से पूर्व की हमारी बी.एससी. प्रथम वर्ष और एम. एससी. पूर्वार्ध की प्रयोगशालाएं उपयोग के लिए तैयार हो गईं। मई मास से अक्टूबर तक मेरे साथ विभाग में केवल दो युवा सहायक आचार्य ही उपलब्ध थे जिनके अथक परिश्रम से विभाग ने प्रारम्भिक कठिनाइयों पर विजय पाई। इसके अतिरिक्त कुलपति और विश्वविद्यालय कार्यालय तथा विभागीय कार्यशाला के यांत्रिक सहित सबने अपने स्तर पर योगदान दिया। अक्टूबर में जब अन्य नियुक्तियां होने पर और सहयोगियों ने पद भार ग्रहण कर लिए तो शिक्षण तथा भविष्य की तैयारियों में और गति आ गई। हमारे विभाग में लगभग सभी सहयोगी शिक्षक 25 वर्ष से कम वय के युवक थे जो त्वरित उन्नयन की दृष्टि से विदेश जाने या अन्य क्षेत्रों में भाग्य आजमाने के इच्छुक थे। तब जब तक वैकल्पिक व्यवस्था न हो हम सब बचे हुए लोग आपस में कार्यभार बांटकर अध्ययन अध्यापन को सामान्य रखने में सहायता करते। केवल प्राध्यापक वर्ग ही नहीं हमारे शिष्य भी कतिपय उपकरणों को और परिष्कृत करने में भी सहायक रहे।

अब से डेढ़ दशक पूर्व की यह घटना सजीव हो उठती है जब हम दिल्ली में अपनी बड़ी पुत्री के यहां ठहरे हुए थे। एक दिन अपरान्ह प्रोफेसर कोठारी (पूर्व अध्यक्ष विश्वविद्यालय अनुदान आयोग) सपत्नीक जीना चढ़कर ऊपर आ गए– उनकी सरलता और सहजता सर्वविदित है। सामान्य बातचीत के दौरान जब उन्होंने स्वयं ही कहा कि गोरखपुर विश्वविद्यालय का भौतिकी विभाग बहुत उन्नत है तो मुझे गर्व हुआ कि हमारे सहयोगी सचमुच बधाई के पात्र हैं अपनी लगन और दायित्व की पूर्ति के लिए।

चाहे इलाहाबाद हो या गोरखपुर मैंने अपने आप को कभी मात्र वेतनभोगी कर्मचारी नहीं माना। दोनों विश्वविद्यालय मेरे परिवार हैं और मैं उनका सदस्य। उनका विकास मेरा विकास रहा है। उनका अनुशासन उसी प्रकार महत्वपूर्ण है जिस प्रकार सुखी परिवार के नियम और संयम। इस सुखद अनुभूति में मैं संतुष्ट था जब 29 जून 1973 को सूचना मिली कि तत्कालीन कुलपति के त्यागपत्र के फलस्वरूप कुलाधिपति ने पहली जुलाई से मुझे कुलपति का कार्य भी संभालने का आदेश दिया है। यह दायित्व संभालते ही समस्याओं ने घेर लिया। उन दिनों प्रदेश में राष्ट्रपति शासन था, कुलाधिपति के सलाहकार (शिक्षा) से मैंने पूछा कि स्थायी कुलपति की व्यवस्था कब तक हो जाएगी ताकि मैं विश्वविद्यालय के संचालन में कोई ऐसा निर्णय न लूं जो मेरे उत्तराधिकारी की परेशानी का हेतु बने। उत्तर देना ही उनके लिए परेशानी बन गई, फिर भी वे बोले,

"प्रदेश के तीन प्रमुख (अपने विशाल प्रांगण वाले) विश्वविद्यालयों के सम्बन्ध में निर्णय लिया गया है कि इलाहाबाद और लखनऊ में प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारियों को कुलपति बनाया जाए तथा गोरखपुर में शिक्षाविद्.... ।" इस नए दायित्व की अवधि समाप्त होने के बाद मैं वापस अपने विभाग में आ गया जिसका परिणाम हुआ मेरे प्रत्येक सहयोगी का वरिष्ठताक्रम में एक सीढ़ी नीचे उतरना। अतः जब इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति पद के लिए न्यौता मिला तो सेवानिवृत्ति से ग्यारह मास पूर्व वहां जाने को तैयार हो गया तथा वहां की चार वर्ष की अवधि पूरी की। इस हैसियत से लगभग साढ़े सात वर्ष में मेरे अनुभव हासिल हुए उनकी यहां विवेचना संभव नहीं, परन्तु यह सब जानते हैं कि शिक्षा अनेक रोगों से ग्रसित है जिनका निदान भी बहुत सरल नहीं है। प्रत्येक जीवधारी में रोगजनक तत्वों से संघर्ष करने की क्षमता होती है, परन्तु जब ये तत्व एक सीमा से अधिक हो जाते हैं तो जीव (वनस्पति, पशु, मानव, पर्यावरण) रोगाणुओं के शिकार बन जाते हैं और ज्ञान तथा शिक्षा स्वयं ऐसा जीवधारी है जिसका निरंतर विकास होता रहता है। उसके रोगी होने में जहां अनेक तत्वों का योगदान है उसमें एक शिक्षक के नाते अपना/हमारा दायित्व सर्वाधिक मानता हूं। यदि शिष्य को स्वस्थ रखने के लिए उचित समय पर आहार, व्यायाम और अनुशासन नहीं देंगे तो जो परिणाम हो रहा है वह सामने है। विलम्ब से प्रवेश, विलम्ब से परीक्षा और परीक्षाफल..... फिर विलम्ब से प्रवेश और कुचक्र चलता है।

एकाएक मुझे वह दिन याद आता है जब बातों बातों में तत्कालीन छात्रसंघ अध्यक्ष ने अकेले में कहा कि वह छात्रों की कक्षाओं में उपस्थिति की अनिवार्यता के पक्ष में है पर मंच से इसका विरोध करेगा। इसी तारतम्य में याद आता है कि वह अवसर जब उचित शिथलन के साथ इस अनिवार्यता का पालन किया गया तो हमारे (शिक्षकों के) अपने बच्चे भी प्रभावित हो रहेंगे। मेरे साथी मिले और सुझाव दिया कि नियमों का पालन किया जाए परन्तु शिक्षकों के बच्चों के मामले में विशेष छूट दी जाए। मेरा निजी अनुभव है कि यदि निष्पक्ष होकर भेदभाव विहीन राजा और रंक के मामले में एक ही आधार अपनाया जाए तो छात्र, शिक्षक, अभिभावक तथा सत्ता के केन्द्र भी हस्तक्षेप करने में संकोच करते हैं।

अपने जीवन के आठ दशकों में मैंने अपने पूर्वजों, माता पिता, स्वजनों, गुरुजनों, विश्व परिवार के सहकर्मियों तथा शिष्यों से सीखा वह मेरी अमूल्य निधि है। भविष्य शिष्यों का है, मुझे विश्वास है। समाज को अपने विवेकयुक्त ज्ञान से सतपथ पर ले जा सकेंगे। विवेक के विषय में तथाकथित निरक्षर और अनपढ़ उन तथ्यों और गूढ़ रहस्यों को जो हमारी पहुंच के बाहर हैं सहज ही पकड़ लेते हैं। इस सम्बन्ध में मुझे अपने गांव का लगभग साठ वर्ष पूर्व का वह वाकया याद आता है जो निवेदिता की 'वापसी' शीर्षक लघु कथा की आत्मा है। हमारे एक सम्पन्न सम्बन्धी ने गांव के सबसे वृद्ध व्यक्ति को दस रुपये (जिसकी तब क्रय क्षमता अब की अपेक्षा 80 से 100 गुनी तक अधिक थी) प्रतिमाह देने का संकल्प किया। पता लगा कि वह व्यक्ति एक 90–95 वर्षीय चर्मकार है। इस प्रस्ताव को उसने अपने दोनों हाथ आकाश की ओर उठाकर यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया, "अभी तो मेरे हाथ पैर काम करते हैं।" दर्शन और समाज विज्ञान इस त्याग, आत्मविश्वास और स्वाभिमान की विवेचना कर सकते हैं। उस तपस्वी द्वारा दिखाई ज्योति आकर्षित करती है, अत्यन्त समीप होते हुए उसी प्रकार पहुंच के परे है जैसे चार–पांच वर्ष की आयु में एक संध्या पूर्व दिशा में लालिमा लिए हुए पूर्ण चन्द्र क्षितिज के समीप ऐसा लग रहा था जैसे जल्दी से चलकर तुरन्त मेरी पकड़ में आ जाएगा। सहसा यह लातानी (लैटिन) सूक्ति कौंधती है–

Temporamutanture et nosmutanmurillis

समय बदलते हैं और फलतः हम उसके साथ बदलते हैं परन्तु वह चार वर्ष का बालक वहीं खड़ा है, न तो वह चांद को छू पाया है और न उस महान योगी के त्याग की अलौकिक आभा की परिधि के छोर तक को भी।

सी–1038, इन्दिरा नगर
लखनऊ–226016

टेढ़ी मेढ़ी पगडंडी

श्रीमती महिमा शर्मा

आज शिवगोपाल मिश्र का आग्रह भरा दूसरा पत्र मिला कि मैं उन डॉ० शर्मा के बारे में कुछ यादें लिखूं जिनके साथ करीब 60 वर्षों से यह टेढ़ी मेढ़ी पगडंडी पार करती रही हूं। आज जब सोचती हूं तो लगता है ये वर्ष कभी इतने लम्बे नहीं लगे जितने आज लग रहे हैं, क्योंकि कुछ भी याद नहीं आ रहा है। दुःख सुख जो भी हुआ उसके समाप्त होने तक कुछ दोष मैंने उन्हें दिया, कुछ इन्होंने मेरे ऊपर डाल दिया और फिर सब भूल गए। यों ही यह गाड़ी एक लीक पर चलती रही।

इनका साथ पाने तक मेरे लिए विज्ञान का मतलब बिजली जलाना या पंखा ऑन करने तक ही सीमित था, परन्तु इस घर में आने पर लगा विज्ञान इतनी कठिन चीज़ हो सकती है, इसलिए मैंने उन सीढ़ियों पर चढ़ने की कभी चेष्टा नहीं की। हां, इतना अवश्य रहा जब हमारे छोटे से ड्राइंग रूम में इन नए नए वैज्ञानिकों की बहस होती तो चाय का प्याला देते देते मुझे भी अच्छा लगने लगा था। मैं बिना समझे बूझे भी भाग लेती परन्तु गृहस्थी की गाड़ी में मेरा समय अधिक लगता क्योंकि डॉ० शर्मा अपने काम के प्रति बहुत समर्पित थे। ये ही नहीं, इनके सब साथी भी इसी तरह के थे। मेरा तो यही विचार था, विज्ञान ही नहीं वैज्ञानिक भी नीरस होते हैं।

इतना अवश्य रहा कि इस पगडंडी पर मैं अधिकतर इनके साथ चलती रही और इसमें डॉ० शर्मा ने पूरा सहयोग दिया। मैंने भी चाहे वह देश के बाहर या देश में रहा हो उस वातावरण से बहुत सीखा। मुझे याद आता है एक बार जब हम लोग कैनेडा में औटावा में रह रहे थे, वहां एक महिला ने मुझसे सवाल किया, डॉ० शर्मा तो साइंटिस्ट हैं, स्वाभाविक है वह बहुत व्यस्त होंगे। आपका समय कैसे बीतता है ? वह भी वैज्ञानिक की पत्नी थी, अवश्य भुक्तभोगी रही होगी। आज यही सवाल मैं अपने से फिर पूछ रही हूं कि मेरा यह इतना लम्बा समय कैसे बीता कि उस पुरुष के बारे में सोच नहीं पा रही हूं जो बराबर मेरे साथ चलता रहा है और अब तक चल रहा है।

हम लोग जब गोरखपुर विश्वविद्यालय जाने वाले थे क्योंकि डॉ० शर्मा को वहां प्रोफेसरशिप का प्रस्ताव मिला था, बहुत बड़ा आकर्षण था, परन्तु सवाल भी बहुत थे। लोगों का कहना था कि वहां अभी कुछ नहीं है। बिल्डिंग भी नहीं बनी है, एक प्रकार से कुछ भी नहीं है, आपका सारा समय इन बातों को देखने में ही निकल जाएगा, इससे आपका शोध कार्य भी बाधित होगा, ऐसे अनगिनत सवाल थे परन्तु शायद भगवान् की इच्छा सर्वोपरि होती है। सब सोचते सोचते हम लोग गोरखपुर चले गए। वास्तव में वहां ऐसा कुछ नहीं था जो कहा जा सके कि प्रशंसनीय है परन्तु डॉ० शर्मा की इस सोच ने साथ दिया कि हर परिस्थिति में कार्य किया जा सकता है। वह पूरे मनोयोग से उसमें लग गए। कई बार कुछ लुभावने प्रस्ताव आए परन्तु उनका विचार था, अब मेरा पहला कर्तव्य यह है कि इसे पूरा करूं। हम लोग कुछ समय तक फिजिक्स डिपार्टमेंट की निर्माणाधीन बिल्डिंग में ही रहे। मुझे अब तक याद है, जब पहली बार मैं और डॉ० शर्मा बाजार तक गए थे। सड़क कंकड़ की थी, हमारे पास तब कोई सवारी नहीं थी, पैदल ही गए थे। वहां आपने डिपार्टमेंट के

लिए पहला स्क्रूड्राइवर का किट खरीदा था। उसके लिए भी आपने छानबीन की थी ताकि विश्वविद्यालय फंड का कम से कम व्यय हो। इस तरह पूरे डिपार्टमेंट का हर व्यक्ति आपकी तरह सोचने लगा था, सबका पूरा सहयोग मिला। आज जब मेरा गोरखपुर जाना होता है तो लगता है जैसे फिजिक्स डिपार्टमेंट पूरे विश्वविद्यालय की रीढ़ बन गया है। धीरे धीरे मैं भी अपने आपको उसका अंग समझने लगी थी। यहां से निकले विद्यार्थी ऊंची ऊंची जगहों पर पहुंच चुके हैं, इससे लगता है कि विभाग का शैक्षिक वातावरण भी बहुत अच्छा बना।

एक बार दिल्ली विश्वविद्यालय से डॉ0 राय गोरखपुर विश्वविद्यालय किसी मीटिंग में आए थे, वह डॉ0 शर्मा के गुरु भी रहे थे। उन्होंने कहा शर्मा तुमने अपने जीवन का इतना कीमती समय यहां दे डाला, भला यहां से तुम्हें क्या मिलेगा ? डॉ0 शर्मा ने कहा यह तो सोचा नहीं, मैंने तो यह कर्तव्य समझकर ही किया है और इसमें मुझे आनन्द आता है। डॉ0 शर्मा ने जब एस्ट्रोफिजिक्स में एम.एससी. कक्षा आरम्भ की थी तब किसी ने सोचा भी नहीं होगा कि वहां प्रदेश का पहला देवेन्द्र शर्मा सेण्टर फार ऐस्ट्रोफिजिकल स्टडीज बनेगा। प्रारम्भ में जब टेलिस्कोप लगा तब रात या सुबह 3–4 बजे भी विद्यार्थी और अध्यापक आते थे। आप भी बार बार चाहे जाड़ा हो या गर्मी जाते, तो हमारी छोटी बेटी प्रातः उठकर उनके साथ पैदल चली जाती थी। इस प्रकार छोटे बड़े सबने उसमें बड़े उत्साह से भाग लिया था। शायद सबकी लगन और उत्साह ने ही उसे प्रदेश का पहला केन्द्र होने का सम्मान दिया।

1998 में गो0 वि0 के फिजिक्स विभाग ने आपका सम्मान किया तब आपके नए पुराने सभी विद्यार्थियों, अध्यापकों ने जो प्रेम और सम्मान दिखाया उसे देखकर मैं तो भावुक हो उठी थी। यह और भी सुखद आश्चर्य हुआ कि हर विभाग के उस समय के और अध्यापक भी उतने ही भावुक थे। डॉ0 डी0डी0 पंत (कुमाऊं विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति) हमारे परिवार के तो एक प्रकार से सदस्य ही थे, उन्होंने बीमारी की हालत में नैनीताल से गोरखपुर तक की यात्रा की। उन्होंने बड़ी आत्मीयता से मुझसे कहा 'मिसेज शर्मा इतने लोगों का प्यार भाग्यशाली लोगों को ही मिलता है।'

देवेन्द्र शर्मा सेण्टर फार ऐस्ट्रोफिजिकल स्टडीज तो प्रदेश का पहला सेण्टर है ही परन्तु फिजिक्स विभाग के ही प्रांगण में देश के किसी विश्वविद्यालय में बनने वाला पहला फोको पेण्डुलम बन रहा है।

आज डॉ0 राय तो नहीं रहे परन्तु मैं ही यह सवाल अपने से पूछती हूं, जिस निष्ठा से डॉ0 शर्मा ने कार्य किया क्या उससे कहीं अधिक विश्वविद्यालय ने उन्हें नहीं दिया ? जो डॉ0 शर्मा ने पाया वह सारे देश में बंट जाएं यही मेरी कामना है।

सी, 1038
इन्दिरा नगर, लखनऊ

मेरे पिता जी

श्रीमती निवेदिता बुढलाकोटी

किसी के लिए भी अपने ही पिता के विषय में कुछ लिखना सम्भवतः सबसे कठिन कार्य है। सोचते ही, स्मृतियों का एक कोलाज रच जाता है, पर हर स्मृति इतनी अपनी, इतनी निजी होती है कि उसमें कोई विशेषता ढूंढ पाना या उसको शब्द देना असम्भव होता है। फिर भी, आप के आदेशानुसार मैं अपनी सम्वेदनाओं को भाषा देने का प्रयत्न कर रही हूं।

आज बिहार के इस क्षेत्र– आर्यभट्ट के 'खगोल' और निकटवर्ती भास्कराचार्य के 'तारेगण' की भूमि में बैठ कर अपने पापा के विषय में जो संस्मरण मुझे सबसे पहले उद्वेलित कर रहे हैं, वे खगोल विज्ञान से ही सम्बन्धित हैं। आज से लगभग 35 वर्ष पूर्व, 1967 में गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में दूरदर्शी आरूढ़ हुआ था। तिमंजले से दो सीढ़ियां लगाकर, उनके ऊपर की छत पर एक टिन की दुछत्ती बनाई गई थी। तिमंजले तक की सीढ़ियां बिल्कुल राजसी थीं, पर उनके आगे लोहे के फ्रेम और लकड़ी के पटरों से जो कामचलाऊ सीढ़ियां बनाई गई थीं, वे असावधान होने पर आपको प्रत्यक्ष ही सितारों की सैर करा सकती थीं।

दूरदर्शी भी विभाग की स्थानीय कार्यशाला की सहायता से आरूढ़ किया गया था। चमक दमक और आभूषणों से हीन पर अपने काम में बिल्कुल मुस्तैद। 1967 की शरद में पहला स्नातकोत्तर कक्षा का बैच बृहस्पति के चन्द्र, चन्द्रमा और सिरियस का अवलोकन कर रहा था। बृहस्पति विशेष रूप से तीन बजे के आसपास स्पष्ट दिखता। अतः पापा भोर में उठ कर वहां जाते।

उन दिनों मानव के अन्तरिक्ष में पहुंचने और उसके एक अन्तराल बाद चन्द्रमा पर पहला कदम रखने ने मानो पूरे विश्व को अभिभूत कर दिया था। हर समाचारपत्र चन्द्रमा के खाई खन्दकों के चित्रों से भरा रहता। तब मैं बहुत छोटी थी, पर न जाने, उन्हीं खाई खन्दकों को साक्षात् दूरदर्शी की आंख से देखने का लोभ था या एक नवीन कौतुक रूपी दूरदर्शी का एक एक पेंच और कील जुटाकर किया जा रहा आरोहण या चन्द्रमा के वास्तविक चित्र मिलने का लोभ, जो मुझे रोज सवेरे उठा देता। उस ठंड में, पापा की अंगुली पकड मैं दो किमी0 तक पैदल जाती, उन सीढ़ियों पर चढ़ती, नित नए कौतुक देखती और फिर वापस आती। तब तक मेरे विद्यालय और पापा के विश्वविद्यालय जाने की तैयारियों का समय हो जाता। लोग बताते, विभाग की हर प्रयोगशाला उन्होंने इसी परिश्रम से एक–एक पेंच जुटा कर स्थापित की थी।

आज कोई आग्रह भी करे तो मैं प्रतिदिन के इस व्यायाम को करने से पहले कई बार सोचूंगी, पर पापा जिस शांति और सहजता से, साथ ही पूरे उत्साह और दृढ़ता के साथ मेरी अंगुली पकड़ कर पूरे ब्रह्माण्ड की सैर कराने ले जाते, वह ही मेरी प्रेरणा थी।

नित नए मोड पर, इसी तरह से वे और मां हम दोनों की अंगुली पकड़ कर हर कठिन परिस्थिति से जूझने का सम्बल देते रहे और जीवन में साक्षात्कार कराते रहे हैं। पर, सबकुछ इतना सहज, इतना स्वाभाविक होता है कि, जब आज एक अन्तराल के बाद, दूर से बैठकर लगभग असम्पृक्त हो देख रही हूं, तब अनुभव कर पा रही हूं कि उस सहजता के पीछे कितना श्रम छिपा था। टहलते हुए, खाने की मेज पर पापा हमसे

छोटे छोटे प्रश्न करते और थोड़ा बहुत सूत्र पकड़ा कभी कभी हल करने में हमारी मदद भी करते। वे प्रश्न हमारे पाठ्यक्रमानुसार होते और सिद्धान्त को कब प्रयोगात्मक बना हमारे सामने स्पष्ट कर देते हमें पता ही नहीं चलता था। यथा, एक इंच व्यास का लड्डू एक रुपये में लें या दो इंच व्यास का चार रुपये में लें ? कौन सा सस्ता होगा ?

(97 X 103) का उत्तर कौन जबानी बताएगा?

कभी खाना खाते खाते ही हम कमरे की रंगाई पुताई का खर्च निकाल लेते। पापा सापेक्षतावाद समझाते, "मैं तुम्हें आधा घंटा भाषण दूं तो तुम्हें तीन घंटे जैसा लगेगा और तुम तीन घंटे फिल्म देखो तो तुम्हें आधे घंटे जैसा लगेगा।"

साथ ही साहित्य, संस्कृति, धर्म, इतिहास, राजनीति पर गर्मागर्म बहस का सबसे बड़ा अड्डा होती थी हमारी खाने की मेज। मां हमें भोजन कराने के साथ साथ सबसे मुखर होतीं। इन विषयों में उनका ज्ञान दर्शनीय था और आज भी है।

गर्मियों की रातों में, पानी का छिड़काव कर, बेले की महकती क्यारियों के पास पलंग डाले जाते। सफेद चादरों पर लेट कर, ऊपर टंगे साफ-शफ्फाक आकाश में देर रात तक हम पापा से विभिन्न नक्षत्रों और तारापुंजों की जानकारी लेते। जब, पापा समझाते हुए उनींदे होने लगते, तो हमें अपना प्रिय प्रश्न थमा देते, "साठ ऊंट नौ खूंटा, ऊने–ऊने बांध दे" (साठ ऊंट और नौ खूंटें हैं। हर खूंटे में विषम संख्या में ऊंट बांधो)।

हम उसका हल ढूंढते न जाने कब सो जाते।

पिकनिक और फिल्में भी हमारे जीवन का हिस्सा थीं। यद्यपि पापा को फिल्मों में रुचि नहीं थी, पर हमारी इच्छानुसार हमें महीने में एक या दो फिल्में दिखाई जातीं। पापा लगभग आधा समय सो कर बिताते। शेष आधे में वे कथा का सूत्र पकड़ने के प्रयत्न में मां से ढेरों प्रश्न करते और इस तरह वे भी आगे के संवाद नहीं सुन पातीं थीं।

उन दिनों, फिल्मों की समाप्ति के बाद पर्दे पर झण्डे के चित्र के साथ 'राष्ट्रीय गान' बजाया जाता। उस दौरान पूरा हाल खाली हो जाता और कभी कभी अगले शो के अधिक उत्साही दर्शक अन्दर आने लगते। पर, पटकी जाती सीटों, धक्का–मुक्की करती भीड़ और झुंझलाए हुआ दरबान की दृष्टि को नकारते हुए हम पंक्तिबद्ध खड़े हो, पूरे उत्साह के साथ गीत के साथ स्वर मिलाते।

हम देशभक्ति केवल इसी स्तर तक आत्मसात कर पाए जबकि, पापा के अन्दर उसका स्रोत है, पर उनका यह पक्ष किसी के सामने उजागर नहीं होता। वे चुपचाप अपने उसूलों पर दृढ़ता से डटे रहे। ब्रिटिश राज्य में प्रशासनिक सेवा के फार्म फाड़ कर देश सेवा का मौनव्रत लेने के बाद, उन्होंने जीवन भर अपने वेतन का एक हिस्सा गरीब छात्रों की पढ़ाई के लिए खर्च किया। कभी किसी घटना से उद्वेलित होते तो अपना बैंक खाता बन्द कर, आंखें मूंद, दान कर देते। पर, ये सब टुकड़े मैंने पापा और मां के आपसी संवादों में से चुराए हैं। वे लोग इसको कहना पसंद नहीं करते हैं और आज भी अगर मैं उन्हें दिखाऊं तो वे इन संस्मरणों में से सबसे पहले यही अंश काटेंगे।

अभी, एक दिन, पापा ने अचानक मुझे यह कहकर चौंका दिया कि, उन्होंने नवीं कक्षा में ही तय कर लिया था कि, वे अपना नाम कभी किस जायदाद पर नहीं लिखेंगे। पापा ने यह वक्तव्य बहुत सहजता से दिया, पर मेरे लिए एक बोध का वातायन मानो अचानक खुल गया। उनकी जो बातें हमें आज तक परेशान करती रही थीं, उनके अर्थ समझ में आने लगे।

पापा को समझने में सम्भवतः मुझे कठिनाई हुई हो, पर उनके शिष्यों ने उन्हें सदा उनका प्राप्य दिया है। अवकाश प्राप्ति के बीस वर्ष पश्चात् भी, पापा के साथ कहीं जाने पर, चरणस्पर्श कर उनको आदर देने वाले मुझे विह्वल कर जाते हैं।

पापा को इस वैराग्य का श्रेय दूं और मां को छोड़ दूं, तो उनके साथ बेईमानी होगी। पराए सिद्धान्तों को जीना बहुत कठिन होता है, पर मां ने पापा के विचारों को अपना लिया इसलिए वे उनके अपने हो गए हैं। तभी, हम मां पापा की ओर से निश्चिंत हैं। हम

सबसे दूर, कंक्रीट जंगल के बीच, अपने अप्रत्यक्ष सन्यास में वे एक दूसरे के पूरक हैं।

मैं यहां से भी देख पा रही हूं कि सुबह की चाय के साथ उनकी ताजा समाचारों की बहस, मां का घर सम्भालना, पापा का पौधों में पानी देना, दोपहरी में अपनी अपनी पुस्तकों में डूबे रहना, बाहर, खुली हवा में शाम की चाय के साथ आगन्तुकों का स्वागत, रात के खाने के बाद की कॉफी के साथ, टी0वी0 पर आ रहे सीरियल के विषय में पापा के ढेरों प्रश्न और आगे के संवादों की आहुति देकर भी मां का हर प्रश्न का उत्तर देना।

शायद अपने बच्चों से हारकर ही इन्सान सबसे सुखी होता है और पापा के शिष्यों ने उन्हें मात दे दी है। अपना नाम कहीं भी न छोड़ जाने से उनके लगभग सत्तर वर्ष पुराने संकल्प को तोड़ डाला है। जहां पर उन्होंने पैंतीस वर्ष पहले एक संभावना की तलाश की थी, वहां 'देवेन्द्र शर्मा खगोल भौतिकी अध्ययन केन्द्र' का पत्थर लगा उनके नाम को बन्दी बना लिया है।

पापा और मां अपने जीवन में बहुत संतुष्ट हैं, जिसके कारण के रूप में मैं उन्हीं का सिखाया यह श्लोक उद्धृत करना चाहूंगी,

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते।।

— *श्रीमद्‌भगवद्‌गीता, अध्याय 4 श्लोक 22*

'रेल सदन'
रेलवे कालोनी, दानापुर
पटना

एक अद्‌भुत घटना

डॉ० पी०के० माथुर

गत 24 जनवरी, 2002 को मैं ऐकेडमिक स्टाफ कालेज, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित नवनियुक्त अध्यापकों के ओरिएन्टेशन प्रोग्राम में लेक्चर देने गया था। लेक्चर के समन्वयक प्रोफेसर बी0एम0 सिंह, पूर्व प्रधानाचार्य थे। लेक्चर की समाप्ति पर, डॉ0 बी0एम0 सिंह से चर्चा के दौरान मुझे प्रो0 देवेन्द्र शर्मा के व्यक्तित्व के बारे में कुछ नई जानकारी हुई जो मुझे उनके पिछले 22 वर्षों के सामीप्य से नहीं प्राप्त हुई।

पूर्व प्रधानाचार्य बी0एम0 सिंह ने बताया कि सन् 1970 के दशक में एक बार कालेज के प्रबन्धक द्वारा उनको Flimsy Grounds पर Suspend कर दिया गया था। उसी दिन उन्होंने श्रीमती महिमा शर्मा जी (पत्नी प्रो0 देवेन्द्र शर्मा) से न्याय की गुहार लगाई। महिमा शर्मा जी ने तुरन्त प्रो0 देवेन्द्र शर्मा से फोन पर बात की। प्रो0 देवेन्द्र शर्मा जी ने तुरन्त फैसला लेकर बी0एम0 सिंह साहब को Reinstate कर दिया था। बी0एम0 सिंह साहब यह जानकर दंग रह गए। आज भी वह इस घटना को याद रखते हैं तथा प्रो0 शर्मा के तुरन्त एवं सही निर्णय देने की ईश्वरप्रदत्त क्षमता की प्रशंसा करते है। ईश्वर प्रो0 देवेन्द्र शर्मा को चिरायु करे।

प्रोफेसर, रसायन विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ- 226007

प्रो० देवेन्द्र शर्मा : कुछ संस्मरण

डॉ० राम कृपाल

मुझे डॉ0 शर्मा से सीधे सम्पर्क का अवसर नहीं मिला क्योंकि जब मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के बी. एससी. कोर्स में प्रवेश लिया तो वे यहां से गोरखपुर जा चुके थे। मेरा पहला सम्पर्क उनसे भौतिकी विभाग में तब हुआ जब वे एम.एससी. उत्तरार्ध (स्पेक्ट्रोस्कोपी) की प्रयोगात्मक परीक्षा लेने आए थे। मैं शोधकार्य पूरा करके पूल आफिसर था और नौकरी तलाश कर रहा था। उनसे मिलने पर उन्होंने मुझसे कुछ देर बात की तथा कहीं और न जाने की सलाह दी। कहा कि मेरी नियुक्ति यहां हो जाएगी। लगभग एक वर्ष पश्चात् मैं प्रवक्ता नियुक्त हो गया। मुझसे बात करते समय उन्होंने शिक्षा के उद्देश्य, विशेष रूप से विश्वविद्यालयस्तरीय पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि शिक्षा का उद्देश्य केवल विद्यार्थी पर सूचनाओं का बोझ लादना नहीं है बल्कि ज्ञान की सीमाओं की वृद्धि के लिए उसकी प्रतिभा को जगाने का है। साथ ही एक अच्छा अध्यापक वह है जो अध्यापक हो जाने पर भी विद्यार्थी जैसा अध्ययनशील रहता है एवं विद्यार्थी की कठिनाइयों को सुलझाने का प्रयास करता है। उन्होंने आगे कहा, "मेरे विचार से कोर्स, आवश्यक प्रयोगशाला कार्य एवं अध्यापक विभाग में इस धारणा को संतुष्ट करते हैं। अतः उक्तानुसार ही आगे बढ़ने का सुझाव दिया।

प्रो0 शर्मा 1937–38 में बी.एससी. के छात्र के रूप में इस विश्वविद्यालय में आए। उन्होंने भौतिकी में एम.एससी. किया। विभाग में उस समय चार क्षेत्रों में प्रायोगिक शोध चल रहा था– आप्टिकल स्पेक्ट्रोस्कोपी, एक्स–रे स्पेक्ट्रोस्कोपी, रेडियो भौतिकी एवं ध्वनि विज्ञान। सैद्धान्तिक दिशा में उस समय आइन्सटाइन के A व B के गुणांक तथा फेब्री–पैरो इन्टरफेरोमीटर द्वारा लेजर व मेजर के सिद्धान्तों की व्याख्या पर कार्य हो रहा था। प्रो0 शर्मा ने प्रो0 के. मजूमदार के साथ आप्टिकल स्पेक्ट्रोस्कोपी में शोधकार्य किया। फिर प्रो0 शर्मा कनाडा गए जहां प्रो0 जी. हर्जबर्ग के साथ एक वर्ष तक कार्य किया। तत्पश्चात् वे 1946 में भौतिकी के प्रवक्ता नियुक्त हुए। वे बहुत अच्छे अध्यापक रहे हैं। प्रो0 शर्मा प्रायोगिक प्रदर्शन बड़ी सावधानीपूर्वक करते थे। व्याख्यानात्मक प्रस्तुतीकरण के समय कक्षा की अनुक्रिया जानने के लिए वे बहुधा प्रश्न पूछते थे। विद्यार्थियों के उत्तर पर उनकी टिप्पणी बड़ी संक्षिप्त व मजेदार होती थी। वे समय के पाबन्द एवं कर्तव्यों के प्रति ईमानदार रहे।

कक्षा में अध्यापन के अतिरिक्त विभाग में ट्यूटोरियल होते थे। इस सन्दर्भ में मुझे एक घटना याद आती है। विद्यार्थियों को दशहरे में घर जाना था। उन लोगों ने प्रो0 शर्मा से अनुरोध किया कि ट्यूटोरियल कक्षा छोड़ दें। उन्होंने यह कहकर मना कर दिया कि ऐसा करना कर्तव्य के प्रति ईमानदारी नहीं होगी और कहा कि भविष्य में भी आप लोगों को ऐसा न सोचने की सलाह देता हूं।

वे अत्यन्त सादे जीवन वाले व्यक्ति रहे हैं। उनके साथ कई लोगों ने शोधकार्य किया जिनमें प्रमुख हैं: डॉ0 मुरली मनोहर जोशी, डॉ0 आर.सी. माहेश्वरी तथा डॉ0 एन. के. सान्याल।

वे बहुत दिनों तक 'विज्ञान' पत्रिका के सम्पादक रहे तथा समसामयिक विषयों पर स्पष्टतः लिखते रहते थे। इस प्रकार के विचारों से वे विज्ञान के लोकप्रिय बनाने एवं जनता में वैज्ञानिक वृत्ति उत्पन्न करने में प्रयत्नशील रहे हैं। 1958 में वे इलाहाबाद से गोरखपुर चले गए। वहां विश्वविद्यालय में भौतिकी के अध्यक्ष रहे तथा कालान्तर में कुलपति के पद को सुशोभित किया। तदुपरान्त वे इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति बने। आजकल प्रो0 शर्मा लखनऊ में निवास कर रहे हैं तथा अब भी उनका भौतिकी से इतना लगाव है कि जब भी कोई सेमिनार या गोष्ठी होती है वे अवश्य उपस्थित होते हैं और अपने उत्कृष्ट विचारों से हम सभी को लाभान्वित करते हैं।

एक बुद्धिमान व्यक्ति जो भी अपने गुरु से प्राप्त करता है, वह अच्छी तरह प्राप्त ज्ञान को वृहद् स्तर पर अपने आप फैलाता है। यह प्रो0 शर्मा जैसे गुरु के मामले में भली भांति लागू होता है। उनके अधिकांश शिष्य एवं युवा पीढ़ी के एल्यूमिनी जो उनकी परम्पराओं में प्रशिक्षित एवं उनकी संस्कृति से ओतप्रोत हैं राष्ट्र एवं विश्व को शैक्षिक, प्रशासनिक, राजनैतिक, औद्योगिक व सामाजिक आदि विभिन्न क्षेत्रों में अपना श्रेष्ठ योगदान प्रदान कर रहे हैं। सही तौर पर यह कहा जा सकता है कि विश्वविद्यालय के मोटो के अनुसार शर्मा-वटवृक्ष की शाखाएं अनेक वृक्षों के रूप में फल फूल रही हैं।

रीडर, भौतिकी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

प्रो० देवेन्द्र शर्मा : एक संस्मरण

प्रो० आर०एस०डी० दुबे

बात करीब लगभग 45 वर्ष पूर्व की है। मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी.एससी. में प्रवेश लिया था। भौतिकी की प्रयोगशाला में मेरी कक्षा प्रो0 देवेन्द्र शर्मा जी की देखरेख में थी तथा एक अन्य प्राध्यापक भी थे। शायद सब कुछ ठीक ठीक बीत जाता, किन्तु मेरे पहले प्रैक्टिकल की कापी प्रो0 शर्मा के हाथ जंची। कुछ लाल निशान लगाकर उस पर Repeat लिख दिया। किसी छात्र की कापी पर Repeat लिख देने से उस छात्र की साथियों के बीच किरकिरी हो जाती थी तथा कम से कम एक सप्ताह तक पिछड़ जाना पड़ता था। अस्तु, एक सप्ताह के बाद जब मैं पुनः कापी प्रो0 शर्मा के पास ले गया तो उन्होंने कुछ प्रश्न किए तथा कुछ दूसरी कमियां निकालीं (जो मेरी समझ में नहीं आयीं) । अब की बार मैंने साहस करके कुछ पूछा तो उत्तर मिला (अंग्रेजी में) "तुम छोटे बच्चे नहीं हो कि चम्मच से खिलाया जाए। बी.एससी. के छात्र हो। जाओ, जाकर स्वयं पुस्तक पढ़े तथा उत्तर ढूंढो।" यह प्रक्रिया करीब चार पांच बार दुहरायी जाती रही। मैंने सहपाठियों से उन बारीकियों के बारे में पूछा किन्तु कोई समाधान नहीं हो सका। अन्त में हारकर पाठ्य पुस्तक के उस अध्याय को कई बार पढ़ा, यहां तक कि वह पूरा कंठस्थ हो गया। फिर स्वयं से प्रश्न बनाकर उत्तर प्राप्त करने का प्रयत्न किया। यह स्वाध्याय के लिए आदर्श बन गया।

एक दूसरी छोटी सी घटना है। प्रो0 शर्मा मेरा फिजिक्स का सेमिनार भी लेते थे। एक सप्ताह में एक बार दिन को अंतिम पीरियड 3.30 से 4.30 बजे पड़ता था। मुझे याद नहीं कि कभी ऐसा अवसर आया हो जब प्रो0 शर्मा ने क्लास छोड़ा हो। दशहरे की छुट्टियां दूसरे दिन आरम्भ हो रही थीं और उस दिन फिजिक्स का सेमिनार भी था। डरते डरते हम लोगों ने प्रो0 शर्मा से प्रार्थना की कि कल से दशहरे की छुट्टियां आरम्भ हो रही हैं। यदि वे उस दिन क्लास न लें तो हम जल्दी जाकर 6.00 शाम को अपने गांव की तरफ (स्थायी निवास) गोरखपुर को जाने वाली गाड़ी को पकड़ लें। उन दिनों केवल एक गाड़ी गोरखपुर जाती थी। हम लोगों की दलीलों का कोई असर नहीं हुआ। हमें छुट्टी नहीं मिली। बातचीत के दौरान प्रो0 शर्मा ने एक बात कही "कक्षा को छोड़ देना गलत है। मैं तुम्हारे सामने कोई गलत आदर्श नहीं रखना चाहता। यदि भाग्यवश तुम लोगों में से कुछ लोग अध्यापक बने तो इस बात को सदा याद रखेंगे।"

बाद में जब प्रो0 शर्मा गोरखपुर विश्वविद्यालय चले गए तो कई बार भेंट होती रही। उनके एक शिष्य श्री उमाशंकर श्रीवास्तव जो सेण्ट एण्ड्रूज कालेज गोरखपुर में प्रवक्ता थे, के साथ घर भी जाता था। कक्षा में कठोर अनुशासनप्रिय अध्यापक के बदले बाहर बहुत ही सहृदय मिलनसार व्यक्ति रहे हैं। बाद में गोरखपुर विश्वविद्यालय में दो बार तथा इन्दौर विश्वविद्यालय में एक बार कुलपति रहे। प्रो0 शर्मा मुझे भूल चुके होंगे लेकिन उनकी ये दो बातें सदा याद रखे रहा हूं तथा अपने अध्यापन काल में अपने छात्रों को ये बातें सुनाता रहा हूं। भगवान् प्रो0 शर्मा को शतायु करें।

प्रोफेसर (अवकाश प्राप्त)
गणित विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

विद्या ददाति विनयम्

डॉ० विभा अवस्थी

यह बात सन् 88–89 की है। तब डॉ0 सतीश चन्द्र गुप्त इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय के क्षेत्रीय निदेशक थे। महाविद्यालय के अनेक कार्यों के सिलसिले में उनसे मिलना जुलना होता था। प्रदेशीय स्तर के कई कार्यक्रम भी डॉ0 गुप्ता मेरे महाविद्यालय में सम्पन्न करवा चुके थे। तभी से मेरा डॉ0 गुप्ता से अच्छा परिचय था। इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय के विशेष कार्यक्रमों में डॉ0 गुप्ता मुझे बड़े आग्रह से बुलाते थे और आगन्तुकों से बड़ी आत्मीयता से परिचय कराते थे। मुझे भी उनके कार्यक्रमों में जाना अच्छा लगता था, डिस्टेन्ट एजूकेशन के बारे में कुछ नया सीखने को मिलता था। ऐसे ही एक कार्यक्रम में डॉ0 गुप्ता मुझसे बोले– आइये आपका परिचय करायें। और एक दुबले पतले गौर वर्ण के वयोवृद्ध भव्य व्यक्तित्व के सामने जाकर बोले "यह डॉ0 विभा अवस्थी हैं, लखनऊ की बेस्ट प्रिंसिपल" और फिर मेरी ओर मुखातिब होकर कहा कि "आप डॉ0 देवेन्द्र शर्मा हैं।" मैं डॉ0 शर्मा के नाम से परिचित थी! वे दो विश्वविद्यालयों के कुलपति रह चुके थे तथा लखनऊ मे रहते थे किन्तु मैं पहचानती नहीं थी। अतः मैंने धीरे से कहा "जी, मैं जानती हूं।" किन्तु अपरिचय की गंध संभवतः स्वर में परिलक्षित हो गई थी। डॉ0 शर्मा ने मेरी ओर सीधे देखा और धीरे से मुस्करा कर बोले, "हम लोग तो पहले मिल चुके हैं।" मेरे पिता पं0 स्व0 हरिकृष्ण अवस्थी असंख्य लोगों को जानते थे और उनमें से अधिकांश घर आते जाते रहते थे। मेरे पिता उन सभी को नाम से जानते थे जिससे एक बार मिल लिए, परन्तु मैंने अपने पिता जैसी विलक्षण स्मरण शक्ति नहीं पाई इसीलिए पिता जी के किसी परिचित को एकाएक न पहचान पाने पर कभी कभार शर्मिन्दा होना पड़ता है। सम्भवतः मेरे चेहरे पर कुछ वैसा ही भाव आ गया होगा और यह सोचकर कि कभी मेरे घर पिताजी से मिलने आए होंगे मैं असमंजस से उभर कर डॉ0 शर्मा से क्षमा याचना करने ही वाली थी कि उन्होंने जैसे कक्षा में किसी बच्चे को किसी प्रश्न का उत्तर न दे पाने पर कोई सूत्र दिया जाता है उसी भाव से थोड़ा मुस्कराकर कहा, "इलाहाबाद में।" मेरा लज्जा का भाव वहीं तिरोहित हो गया और मैंने यह सोचकर कि सम्भवतः किसी और को समझ रहे हैं, तपाक से उत्तर दिया "इलाहाबाद तो मैं कभी गई ही नहीं।" मेरे उत्तर से डॉ0 शर्मा के चेहरे की मुस्कराहट थोड़ी और बढ़ गई और मेरी ओर स्नेहसिक्त दृष्टि डालकर पूछा, "कभी नहीं गई !" मैंने कहा "केवल एक बार गई थी कई वर्ष पहले। प्रिंसिपल का इण्टरव्यू देने।" वे हंसकर बोले, "तभी।" सम्भवतः मेरे चेहरे का भाव तब भी ऊहापोह का रहा होगा। से थोड़ा रुककर कौतुक से देखते रहे फिर बोले "मैं आपके इण्टरव्यू बोर्ड में था।" मैं सामने खड़े व्यक्ति की विलक्षण स्मरण शक्ति से अभिभूत हो गई। अति विनम्रता से धीमा सा स्वर निकला "आप इतने इण्टरव्यू लेते हैं, फिर भी आपको याद रहता है कि आपने कब किसका इण्टरव्यू लिया था। आपकी स्मरणशक्ति तो विलक्षण है।" डॉ0 शर्मा ने इसका जो उत्तर दिया उससे उनके प्रति मेरा आदर एवं सम्मान का भाव द्विगुणित हो गया। वे बोले, "इससे मेरी स्मरण शक्ति का कुछ भी नहीं है। आपका इण्टरव्यू ही इतना अच्छा हुआ था कि ......।" उनकी विनम्रता अनुकरणीय थी। उसके बाद से डॉ0 शर्मा से अनेक बार भेंट हुई। लम्बा वार्तालाप भी हुआ। उनके व्याख्यान भी सुने और हर बार बहुआयामी व्यक्तित्व के किसी न किसी रूप से परिचय हुआ। उनके प्रति आदर एवं सम्मान का भाव श्रद्धा में परिवर्तित हुआ। 'विद्या ददाति विनयम्' की वे साक्षात् प्रतिमूर्ति हैं।

ऐसे विद्वान विलक्षण प्रतिभा के धनी और विनम्रता की प्रतिमूर्ति संतपुरुष डॉ0 देवेन्द्र शर्मा जी को मेरा शत् शत् नमन। ईश्वर उन्हें स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन प्रदान करे।

प्राचार्या
नवयुग कन्या महाविद्यालय
लखनऊ

प्रो० देवेन्द्र शर्मा : जैसा मैंने देखा

डॉ० सालिक सिंह

वस्तुतः प्रो0 देवेन्द्र शर्मा शिक्षा जगत के देदीप्यमान नक्षत्र एवं प्रसिद्ध वैज्ञानिक हैं जिन्होंने गोरखपुर विश्वविद्यालय एवं इन्दौर विश्वविद्यालय के कुलपति पद को सुशोभित किया है। प्रो0 शर्मा के कार्यकाल में मैंने गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर से भूगोल विषय में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की है। इस अवधि में कतिपय समस्याओं को लेकर मिलने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ है। वे समस्याओं का निदान उसी प्रकार कर देते थे जिस प्रकार एक पिता अपने पुत्र की समस्या का निदान करता है। सहृदय, सरल एवं व्यक्तित्व के धनी प्रो0 शर्मा सभी विद्यार्थियों के साथ समान भाव अपनाते रहे हैं। वैसे मैं विज्ञान का विद्यार्थी नहीं रहा हूं और न ही मेरा व्यक्तिगत घरेलू सम्बन्ध रहा है फिर भी प्रो0 शर्मा के कार्यकाल के कुछ संस्मरण आज भी मेरे मानस पटल पर विद्यमान हैं।

संक्षेपतः प्रो0 शर्मा ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन-अध्यापन करने के पश्चात् गोरखपुर विश्वविद्यालय में अपना कार्यक्षेत्र बनाया। आपके निर्देशन में प्रो0 मुरली मनोहर जोशी, प्रो0 एन.के. सान्याल, प्रो0 आर.सी. माहेश्वरी जैसे प्रसिद्ध विद्वान डाक्टरेट की उपाधि धारण कर चुके हैं। आप फेलोशिप के अन्तर्गत कनाडा में भी शोधकार्य कर चुके हैं।

आपके कार्यकाल में भूगोल विभाग के अध्यक्ष प्रो0 उजागिर सिंह द्वारा एक सातदिवसीय समर इन्स्टीट्यूट आयोजित किया गया था जिसकी अध्यक्षता आप द्वारा की गई थी। मुख्य वक्ता प्रो0 आर.एल. सिंह (बी.एच.यू.) थे। अपने उद्घाटन भाषण में आपने यह उद्बोधन किया था कि किसी भी क्षेत्र का विकास भौगोलिक ज्ञान के बिना नहीं किया जा सकता है। इसी समय आपने भूगोल विभाग को अलग भवन देने का भी वादा किया था जिसके फलस्वरूप गोरखपुर विश्वविद्यालय में भूगोल विभाग का अलग भवन बनवाया गया है।

1973 में ही आपके कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् अगस्त के अन्तिम दिनों में अंग्रेजी हटाओ तथा अन्य समस्याओं के सम्बन्ध में छात्रों का आन्दोलन हुआ था जिसका नेतृत्व पूर्व छात्रसंघ अध्यक्ष कल्पनाथ राय, सुशील कुमार श्रीवास्तव एवं रवीन्द्र प्रताप सिंह ने किया था। इस आन्दोलन के कारण विश्वविद्यालय अनिश्चित काल के लिए बन्द करा दिया गया तथा छात्रावासों को खाली कर दिया गया। विश्वविद्यालय परिसर में पी.ए.सी. के जवानों को तैनात कर दिया गया था। ऐसी भयावह स्थिति में आपने अपने विवेक का परिचय देते हुए प्रशासन तथा छात्रों के प्रतिनिधियों से मिलकर समस्याओं का समाधान कराकर 15 दिन के अन्दर शैक्षणिक वातावरण कायम किया। यह आपकी प्रशासनिक क्षमता को दर्शाता है।

आपके पूर्व राजनीतिज्ञों की अवधारणा थी कि कुलपति पद पर केवल भारतीय प्रशासनिक अधिकारी ही नियुक्त होंगे परन्तु शिक्षकों की मांग पर गोरखपुर विश्वविद्यालय में आप प्रथम शिक्षाविद् कुलपति के रूप में सुशोभित हुए। इससे शिक्षकों का मान बढ़ा तथा शैक्षिक वातावरण पल्लवित एवं पुष्पित हुआ।

मैं प्रोफेसर शर्मा के दीर्घायु होने तथा सदैव स्वस्थ रहने की ईश्वर से कामना करता हूं।

अध्यक्ष, भूगोल विभाग
ला.ल.ना. डिग्री कालेज, सिरसा इलाहाबाद

पारिवारिक जीवन की एक झांकी

श्याम बिहारी लाल

विज्ञान भूषण डॉ0 देवेन्द्र शर्मा जी का व्यक्तित्व उत्तम गुणों का ऐसा समिश्रण है जैसा मैंने अपने जीवन में कोई दूसरा नहीं देखा।

उनसे परिचय प्राप्त करने का सौभाग्य मुझे 1939 में प्राप्त हुआ, जब मैंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भौतिक शास्त्र में एम.एससी. कक्षा में दाखिला लिया। वह भौतिक शास्त्र में बी.एससी. ऑनर्स के तीसरे वर्ष में यानी उनकी व मेरी एक ही कक्षा हुई। वे सर पी.सी. बैनर्जी छात्रावास के 49 नम्बर कमरे में रहते थे। मुझे भी रहने का स्थान इसी छात्रावास के 47 नम्बर कमरे में मिला। इस प्रकार मुझे उनके सम्पर्क में आने का अवसर मिला।

यूं तो वह एक वैज्ञानिक परिवार से आते थे और मैं एक व्यापारिक परिवार से, परन्तु हमारी मानसिक मान्यतायें तथा स्वभाव काफी हद तक मेल खाते थे। हम दोनों एक ही रसोई में बिल्कुल सात्विक भोजन करते, भौतिक शास्त्र विभाग तक दोनों ही पैदल साथ साथ जाते थे; संध्या को दोनों ही साथ 2–3 मील की सैर करने जाते थे। हां, रहा अन्तर हम दोनों में– उनकी बुद्धि बहुत प्रखर थी और मेरी मध्यम। वह जो नोट्स अध्यापकों के लिखकर लाते थे, वही छात्रावास में एक दो घण्टे मनन करना पर्याप्त था– जबकि मुझे कई कई घण्टे किताब व नोट्स को पढ़ना पड़ता था। उनका अभ्यास था कि रात को 10 बजे तक बिस्तर पर बैठकर रामचरितमानस की कुछ पंक्तियां पढ़कर सो जाते थे।

उनका चरित्र और पहनावा बिल्कुल सादा था। वह खादी की धोती व कुर्ता पहनते थे जबकि हम सब पैन्ट कमीज (वह भी खादी की नहीं) पहनते थे।

समय के साथ साथ हमारा अपनत्व बढ़ता ही गया। पारिवारिक परिचय भी हो गया। हां, वह उसूल के बड़े पक्के थे। एक बार मेरे द्वारा किए हुए एक्सपेरिमेन्ट में ऐसा रिजल्ट आया कि सभी अचम्भित हो गए और मेरी विद्वता आंकने लगे– परन्तु शर्मा जी ने कहा कि यह फ्ल्यूक है, असलियत नहीं। वह इस पर दृढ़ रहे। एक दो दिन हम लोग अलग अलग रहे– परन्तु बाद में मैंने उनके विचारों को सही माना और फिर उसी प्रकार की नजदीकियां आ गईं।

1941 में परीक्षा समाप्त होने पर उन्होंने पी. एचडी. करने का निश्चय किया और मैं अपने परिवार के व्यापार से जुड़ गया। इस पर भी हमारा स्नेह कम नहीं हुआ। जब भी इलाहाबाद से गुजरना होता उन्हीं के पास ठहरता। उनके विवाह में मैं सम्मिलित हुआ और सन् 1944 में मेरी अकेली छोटी बहन के विवाह में बनारस में वह श्रीमती महिमा जी के साथ सबसे पहले पहुंचे। वैवाहिक कार्यक्रम में भाई भाभी की भूमिका इन्होंने ही निभाई– मैं तो बारात आने के कुछ ही घण्टे पहले विवाह में सम्मिलित होने पहुंचा। आजतक मेरे बहनोई शर्मा जी को मुझसे ऊंचा रुतबा देते हैं। मेरी माताजी भी उन्हें बहुत स्नेह देती थीं। समय गुजरता गया। हमारे प्रेम में कमी नहीं आई– बढ़ता ही गया। दिल्ली आते थे तो मेरे पास ही ठहरते थे। मेरे कोई बेटी नहीं हुई। इनकी दोनों बेटियों को अपना समझा और उन्होंने मुझे चाचा समझा।

ऐसा व्यक्तित्व जिसमें इतनी पारदर्शिता हो– मैंने जीवन में नहीं देखा। मैं उनको बड़ा भाई मानता हूं और उन्हें नमन करता हूं।

4, अन्डर हिल रोड
सिविल लाइन्स, दिल्ली–54

गोरखपुर विश्वविद्यालय में तीन वर्ष

डॉ० एस०वी०एम० त्रिपाठी

मैंने दिनांक 4 जून, 1958 को गोरखपुर विश्वविद्यालय में तदर्थ नियुक्ति के फलस्वरूप सहायक प्राचार्य भौतिक विज्ञान विभाग के पद पर योगदान दिया। उस समय प्रो0 देवेन्द्र शर्मा विभागाध्यक्ष के पद पर आसीन थे तथा अन्य कोई नहीं था। कुछ दिनों बाद डॉ0 मेहरोत्रा ने भी सहायक प्राचार्य के पद पर कार्य करना आरम्भ किया। यह विभाग एकमात्र निर्मित 'पन्त ब्लाक' में अन्य कई विभागों तथा कार्यालयों के साथ स्थित था। प्रो0 शर्मा इसी भवन खण्ड के एक भाग में उस समय सपरिवार निवास भी कर रहे थे। कुछ समय बाद 'मजीठिया ब्लाक' बन जाने के बाद भौतिक विज्ञान विभाग को अपना उचित स्थान मिला।

नियम, अधिनियम तथा स्वस्थ परम्परायें प्रो0 देवेन्द्र शर्मा के मूल सूत्र थे। उस समय अधिकतर कर्मचारी तथा कुछ समय बाद शिक्षक भी विभिन्न विद्यालयों से आते थे जहाँ कदाचित नियमों का शिथलीकरण मात्र एक और विकल्प के रूप में माना जाता था। तथ्यों के आधार पर प्रो0 शर्मा स्पष्टतम रूप से 'हाँ' अथवा 'नहीं' कहने के आदी थे। जब वह 'नहीं' कहते थे तब उनके चेहेर का रंग तथा उनकी भंगिमा इस प्रकार के होते थे कि उससे रहा सहा सन्देह भी जाता रहे। कई व्यक्तियों को इस अनुभव से उबरने में समय लगता था।

भौतिकी विभाग में स्नातक तथा उत्तर स्नातक स्तर की प्रयोगशालाओं की स्थापना वरीयता क्रम मे उच्च स्थान पर थी तथा हम सभी उस कार्य में लग गए। यह स्पष्ट था कि प्रो0 देवेन्द्र शर्मा का अनुभव, लगन तथा मितव्ययिता का प्रयोजन केवल आधुनिकतम तथा उच्चस्तरीय प्रयोगशालाओं की स्थापना तथा विश्वविद्यालय के संसाधनों की रक्षा थी। उस समय निरन्तर 'बर्मा टीक' तथा 'स्थानीय टीक' में क्या अच्छाई या बुराई है, विभिन्न स्रोतों से प्रयोगों के लिए उपकरण उपलब्ध करने में हानि अथवा लाभ की ही चर्चा होती थी। धन व्यय का सर्वाधिक लाभ विभाग तथा कालान्तर में विद्यार्थियों को कैसे मिले– इसी पर उनका ध्यान केन्द्रित रहता था। कदाचित और लोग भी ऐसा करते हों परन्तु मैंने पहली बार प्रो0 शर्मा को बाहर से आए लिफाफों को फाड़कर उसी कागज पर हाथ से पत्रों के मसौदे लिखते हुए देखा। यह सब कृत्य वास्तविक नैतिकता तथा विश्वास पर आधारित थे तथा इनमें दिखावा कुछ भी नहीं था।

विश्वविद्यालय सेवा आरम्भ करते समय मेरी आयु 20 वर्ष से कुछ कम थी तथा अध्यापन का अनुभव शून्य था। स्नातक तथा उत्तर स्नातक कक्षाओं को आरम्भ करने के फलस्वरूप जो भार था उसमें न्यूनतम भाग ही मुझे दिया गया। प्रशासनिक कार्यों में अत्यधिक व्यस्तता होते हुए भी प्रो0 शर्मा ने सबसे अधिक कक्षाओं का अध्यापन भार ग्रहण किया। कुछ समय बाद अन्य सहयोगियों ने जब भौतिकी में कार्यभार ग्रहण किया तब हम सभी को कुछ त्राण मिला।

विभाग में कार्य समापन के बाद प्रो0 शर्मा के साथ डॉ0 मेहरोत्रा तथा मैं नियमित रूप से उनके

निवास पर चाय तथा अन्य जलपान के लिए जाने लगे। कुछ दिनों बाद जब हम दोनों ने सोचा कि ऐसा प्रतिदिन करना कदाचित ठीक नहीं है तो इस अनिवार्य आतिथेय से बचने के लिए हम दोनों ने कुछ बहाना बनाना चाहा। प्रो0 शर्मा तथा उनकी पत्नी श्रीमती महिमा शर्मा ने हम लोगों की एक नहीं सुनी। फलस्वरूप हम दोनों अविवाहित अध्यापक चाय, पकौड़ी तथा अन्य व्यंजनों का स्वाद निरन्तर लेते रहे। जलपान के समय शर्मा जी की बड़ी और उस समय एकमात्र पुत्री मधूलिका (गुड़िया) सक्रिय रूप से वार्ता में भाग लेती तथा मनोरंजन का केन्द्र बनी रहती थी। यदि कोई व्यावसायिक समस्या दिन में बच जाती थी तो उसके निदान के लिए गम्भीर चर्चा भी उसी समय हो जाती थी।

प्रो0 शर्मा घोर स्पष्टवादी थे। यदि कोई बात उनको अनुचित अथवा विधिविरुद्ध लगती थी तब उसका प्रतिकार बलपूर्वक अवश्य करते थे, चाहे उनके समक्ष उनसे पद तथा आयु में छोटा व्यक्ति हो अथवा बड़ा। प्रशासनिक कार्य तो वह लगन से करते ही थे परन्तु वास्तव में उनकी अधिक रुचि पठन, पाठन तथा शोध कार्य में रहती थी। उनका ध्येय सर्वदा यही रहा कि गोरखपुर विश्वविद्यालय स्थानीय विद्यालयों का एक बड़ा संस्करण बनकर न रह जाए बल्कि विश्वस्तरीय शोध तथा शिक्षा प्रणाली निर्मित तथा प्रसारित कर सके। यह लक्ष्य पाने के लिए प्रो0 शर्मा ने एकाग्रचित्त होकर कार्य किया।

मई 1961 के अन्त में मैंने भारतीय पुलिस सेवा के प्राथमिक प्रशिक्षण के लिए राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी, मंसूरी को प्रस्थान किया। अपने सेवाकाल में जब भी मैं गोरखपुर अपने माता पिता से मिलने जाता था, प्रो0 शर्मा से उनके कार्यालय अथवा निवासस्थान पर अवश्य मिलता था। अवकाशप्राप्ति के बाद जब वे लखनऊ निवास के लिए आए तब से समय समय पर भेंट होती रही है। प्रो0 देवेन्द्र शर्मा में विद्वता, विधान, नियम, अधिनियम् के प्रति असीम निष्ठा के साथ साथ गहरी आत्मीयता तथा सहिष्णुता सर्वदा बनी रही है।

प्रो0 देवेन्द्र शर्मा के सम्मान में 'विज्ञान' के विशेषांक के लिए अपने संस्मरण प्रेषित करते हुए मैं अपने को गौरवान्वित मानता हूँ।

भूतपूर्व पुलिस महानिदेशक, उत्तर प्रदेश
तथा महानिदेशक, के.रि.पु.ब.

आचार्य शर्मा: जैसा मैंने देखा-पाया

प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि श्रद्धेय आचार्य देवेन्द्र शर्मा जी के प्रेरणास्पद, अनुकरणीय व्यक्तित्व एवं कृतित्व से संबंधित 'विज्ञान' पत्रिका का एक विशेषांक प्रकाशित होने जा रहा है। वास्तविकता तो यह है कि आचार्य शर्मा जैसे विलक्षण व्यक्तित्व के धनी का हमारे बीच में रहना, उनके सम्पर्क में आना, उनसे कुछ सीखना सौभाग्य की बात है।

यह सच है कि विधिवत् विद्यार्थी के रूप में, उनके चरणों में बैठकर उनसे शिक्षा ग्रहण करने का सौभाग्य तो मुझे नहीं मिला क्योंकि गोरखपुर विश्वविद्यालय में एम.एससी. वनस्पति विज्ञान का पहले बैच का विद्यार्थी था, फिर भी चूंकि उनका आवास मेरे गुरु, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के वनस्पतिविज्ञानी श्रद्धेय आचार्य के.एस. भार्गव के समीप था, इस कारण डॉ0 भार्गव के निवास पर ही मुझे उनसे सर्वप्रथम मिलने और निकट से देखने और उनकी बातें सुनने का अवसर मिला। बाद में 1963 में जब मैं इलाहाबाद चला आया तो भी गोरखपुर जाने पर जब भी उनसे मिलता, वे बड़े ही स्नेह से मिलते और इलाहाबाद के विषय में पूछते।

मेरे सहपाठी और अभिन्न मित्र भाई माधवानन्द तिवारी (अब स्वर्गीय) गोरखपुर विश्वविद्यालय के छात्रसंघ के पहले निर्वाचित अध्यक्ष थे। उन दिनों विश्वविद्यालय के विभिन्न विभागों में आपसी संबंध बड़े सौहार्दपूर्ण थे। मैं भाई माधवानन्द के साथ प्रायः डॉ0 एन.के. सान्यांल, भौतिकी विभाग के तत्कालीन प्रवक्ता और पूर्व कुलपति राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन विश्वविद्यालय, इलाहाबाद से मिलने जाता रहता था। इस कारण डॉ0 शर्मा के भी दर्शन हो जाते थे।

डॉ0 शर्मा भौतिक विज्ञान विषय में उच्चस्तरीय शोध के लिए विख्यात थे। किन्तु यहां मुझे उनके कृतित्व के संबंध में कुछ नहीं कहना है क्योंकि विज्ञान की इस शाखा में मेरी गति नहीं है। यहां मैं उनके कुछ व्यक्तिगत गुणों की ही चर्चा करूंगा।

आचार्य शर्मा के व्यक्तित्व की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि क्षणमात्र के लिए भी उनके सम्पर्क में आने के बाद उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रहा जा सकता। डॉ0 शर्मा मितभाषी और मृदुभाषी व्यक्ति हैं। इतने धीरे-धीरे बोलते हैं कि आपको उनकी बातें सुनने के लिए बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती है। युवावस्था में भी यह आदत विद्यमान थी और अब भी बनी हुई है। मैंने उन्हें कभी जोर से बोलते हुए नहीं सुना। उनके गरिमापूर्ण गंभीर व्यक्तित्व के समक्ष कोई अभद्र या अयाचित शब्द मुंह से निकल न सके इसके लिए विशेष रूप से सावधान रहना पड़ता है। अति सरल, सहृदय और असामान्य मृदु स्वभाव के बावजूद उनके व्यक्तित्व की तेजस्विता के कारण उनके प्रति भयमिश्रित आदर का भाव बना रहता है। वार्तालाप के समय वे सदैव ही अति शिष्ट भाषा का प्रयोग करते हैं।

प्रोफेसर शर्मा की स्मरणशक्ति गजब की है। एक बार सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद के भौतिकी विभाग के अध्यक्ष और उप प्राचार्य डॉ0 एस.बी. लाल, गोरखपुर गए हुए थे। मैं भी वहीं था। डॉ0 लाल ने डॉ0 शर्मा से मिलने की इच्छा व्यक्त की और मुझे भी साथ चलने को कहा। वे डॉ0 शर्मा के विद्यार्थी रह चुके थे और डर रहे थे कि शायद डॉ0 शर्मा उन्हें पहचान न पाएं। किन्तु डॉ0 शर्मा ने उन्हें उनके पूरे नाम श्याम

बिहारी लाल से पुकार कर आश्चर्यचकित कर दिया।

इलाहाबाद में रहते हुए जब मैं विज्ञान परिषद् प्रयाग के सम्पर्क में आया तो मुझे मालूम हुआ कि गोरखपुर विश्वविद्यालय में विभागाध्यक्ष का पदभार ग्रहण करने के पूर्व जब वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में कार्यरत थे तब उन्होंने अनेक लोकप्रिय लेख लिखे और परिषद् द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'विज्ञान' के यशस्वी सम्पादक भी रह चुके हैं। इस प्रकार हिन्दी भाषा के माध्यम से विज्ञान को जन जन तक पहुंचाने का लोकोपयोगी कार्य भी किया है। उनके व्यक्तित्व का यह पक्ष मेरे लिए बाद में उजागर हुआ। विज्ञान परिषद् पर उनकी असीम अनुकम्पा आज भी यथावत् बनी हुई है।

डॉ0 शर्मा विद्वता, मान-सम्मान और पद के उच्चातिउच्च शिखरों पर आसीन होने के बावजूद पहले जैसे ही सरल हैं।

पूर्व सम्पादक
'विज्ञान' मासिक
पूर्व अध्यक्ष
वनस्पति विज्ञान विभाग
सी.एम.पी. डिग्री कॉलेज, इलाहाबाद

स्मृति अर्घ्य

जय नारायण राय

बात सन् 1966 की है। मैं उस समय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के 'फिजिक्स सेल' में कार्यरत था और गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी के प्रवक्ता पद के चयन में साक्षात्कार के लिए आया था। प्रवक्ता पद के चयन के लिए साक्षात्कार हो रहा था। मेरी बारी आने पर मुझे भीतर बुलाया गया। सामान्य औपचारिकताओं के बाद, कुलपति ने डॉ0 देवेन्द्र शर्मा से, मुझसे प्रश्न पूछने के लिए कहा। डॉ0 शर्मा चयन समिति में, भौतिकी के अध्यक्ष के रूप में बैठे थे। उस समय मेरे पास तीन प्रकाशित शोधपत्र थे। उन शोधपत्रों से सम्बन्धित, वे मुझसे प्रश्न पूछते रहे और कुछ देर बाद, कुलपति से मेरे बारे में उन्होंने अपनी 'सन्तुष्टि' व्यक्त की। मैं उनके व्यवहार से प्रसन्न तो हुआ किन्तु अवाक् भी था। उस समय प्रवक्ता के मात्र तीन पद थे। उनके स्वयं कई अच्छे छात्र भी थे जो उस समय अस्थायी रूप से अध्यापन कार्य कर रहे थे। मैं तो बाहर से आया था। उस समय पीएच.डी. भी नहीं था। तो फिर उन्होंने मेरी संस्तुति कुलपति से क्यों की ? बाद में चयन समिति के साक्षात्कार का परिणाम भी आया। तीन सफल अभ्यर्थियों में मेरा भी नाम था। यदि डॉ0 शर्मा के मन में तनिक भी 'कल्मष' रहा होता तो शायद आज मैं गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में नहीं होता।

उन्हें मेरी श्रद्धा का अर्घ्य समर्पित है।

भौतिकी विभाग
गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर

देवेन्द्र शर्मा ज्योतिर्विज्ञान अध्ययन केन्द्र

प्रो० राधे मोहन मिश्र

आकाशीय पिण्डों का मनोहारी दृश्य आदि काल से सामान्य से सामान्य व्यक्ति के मन–मस्तिष्क को न केवल रोमांचित करता आ रहा है बल्कि उनकी उत्पत्ति, विचरण एवं गति आदि के बारे में अनेक जिज्ञासाओं एवं प्रश्नों को उत्थित करता रहा है फलतः खगोलशास्त्र को विज्ञान की प्राचीनतम एवं अत्यन्त महत्वपूर्ण शाखा होने का गौरव प्राप्त है। यद्यपि आज विज्ञान की विभिन्न शाखाएं अत्यन्त विकसित होकर पूर्णता प्राप्त कर चुकी हैं तथापि खगोलशास्त्र की महत्ता किंचित भी कम नहीं हुई है और न ही आकाशीय पिण्डों के बारे में हमारी जिज्ञासा। आकाशीय पिण्ड अपनी विविधताओं और विचित्रताओं तथा नित नवीन उद्घाटित होने वाले रहस्यों के कारण न केवल खगोल भौतिकी के लिए बल्कि मूलभूत भौतिकी के लिए भी अत्यन्त विशिष्ट प्राकृतिक प्रयोगशालाओं के रूप में देखे जा रहे हैं। हीलियम को उत्तरोत्तर अन्य भारी तत्वों में परिवर्तित करने वाली नाभिकीय भट्ठियां, ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति के समय एकत्रित असामान्य अति घनीभूत पदार्थ, असामान्य अति उच्च ताप तथा अन्य असामान्य भौतिकीय स्थितियां शायद की कभी पृथ्वी की किसी प्रयोगशाला में उत्पन्न की जा सकें। खगोल भौतिकी का अध्ययन विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास में महत्वपूर्ण एवं अग्रणी भूमिका निभाने में सक्षम है। अतएव विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अध्ययन तथा शोध के लिए युवकों को उत्प्रेरित करने हेतु खगोल भौतिकी विषय का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है।

गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग ने अपनी संस्थापना के कुछ वर्षों के बाद ही सन् 1968 से खगोलशास्त्र की शिक्षा परास्नातक स्तर पर प्रारम्भ कर दिया था। भौतिकी विभाग के संस्थापक अध्यक्ष प्रोफेसर देवेन्द्र शर्मा, जिनकी ख्याति एक आदर्श शिक्षक, लब्धप्रतिष्ठ, उच्चकोटि के शोधकर्ता, वैज्ञानिक, सरल एवं सुरुचिपूर्ण सम्भ्रान्त किन्तु संवेदनशील व्यक्तित्व के धनी, हिन्दी तथा भारतीय संस्कृति के अनुरागी, आदर्शों एवं सिद्धान्तों के लिए प्रतिश्रुत व्यक्ति के रूप में पहले से ही स्थापित थी उनकी दूरदृष्टि एवं कुशल नेतृत्व का यह परिणाम है कि उनके द्वारा अत्यन्त सीमित संसाधनों और बिना किसी बाहरी अनुदान अथवा सहायता के खगोलशास्त्र में अध्ययन तथा शोध प्रारम्भ किया गया। यह कार्यक्रम पल्लवित और पुष्पित होकर आज राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना चुका है। प्रारम्भ में 8 सेमी० की अपवर्तक तथा 15 सेमी० की परावर्तक दूरबीन और 2 मीटर की अवतल ग्रेटिंग स्पेक्ट्रोग्राफ से खगोलभौतिकी की प्रयोगशाला को सुसज्जित किया गया। साथ ही, यहां के छात्रों एवं शोधकर्ताओं को बड़ी दूरबीनों पर कार्य करने का अनुभव प्रदान करने के लिए उत्तर प्रदेश सरकार की राजकीय वेधशाला (यू.पी.एस.ओ.) नैनीताल के साथ आपसी सहयोग पर आधारित कार्यक्रमों की आधारशिला रखी गई। कालान्तर में खगोल भौतिकी प्रयोगशाला के पास थियोडोलाइट तथा 25 सेमी० परावर्तक दूरबीन भी आ गई। आज भारतीय खगोलभौतिकी संस्थान (Indian Institute of Astrophysics) बंगलौर तथा अन्तर्विश्वविद्यालय खगोलभौतिकी एवं खगोलिकी केन्द्र (IUCCA) पुणे से भी शोध के स्तर पर सहयोग कार्यक्रम चल रहे हैं। इसके साथ ही, भौतिकी विभाग ने आइन्स्टीन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त एवं भौतिकी के अन्य सैद्धान्तिक विषयों में शोध कार्य करते हुए देश के महत्वपूर्ण संस्थानों में अपनी पहचान बनाने में सफलता प्राप्त की है। इस विश्वविद्यालय के खगोलभौतिकी के छात्र देश के प्रतिष्ठित संस्थानों में उच्च पदों पर प्रतिष्ठित हैं। 'एस्ट्रोनामिकल सोसाइटी आफ इंडिया'

(Astronomical Society of India) ने इस विश्वविद्यालय के तत्वावधान में वर्ष 1982 में आठवां एवं वर्ष 2000 में बीसवां अधिवेशन गोरखपुर में आयोजित किया। इस परिप्रेक्ष्य में गोरखपुर विश्वविद्यालय ने खगोलभौतिकी में अध्ययन एवं शोध हेतु एक विशिष्ट केन्द्र स्थापित करने का निर्णय लिया, जिसका नामकरण 'डॉ0 देवेन्द्र शर्मा ज्योतिर्विज्ञान अध्ययन केन्द्र' (Dr. Devendra Sharma Centre for Astrophysical Studies) किया गया। प्रोफेसर शर्मा के नाम पर ज्योतिर्विज्ञान केन्द्र की स्थापना इस क्षेत्र में उनकी निष्ठा एवं समर्पण, दूरदृष्टि और पूर्वांचल में उच्च शिक्षा, विशेषकर वैज्ञानिक शोध तथा अध्ययन की आधारशिला रखने के लिए किए गए योगदान के प्रति सच्चा सम्मान है।

पहले यह इंगित किया गया है कि भौतिकी विभाग और यू.पी.एस.ओ. नैनीताल में आपसी सहयोग पर आधारित शोध कार्यक्रम प्रारम्भ से ही संचालित होते रहे हैं। इस सहयोग कार्यक्रम में एक महत्वपूर्ण मोड़ तब आया जब लगभग चार वर्षों पूर्व प्रो0 रामसागर की नियुक्ति यू.पी.एस.ओ. के निदेशक पद पर हुई। वे इसी विश्वविद्यालय के छात्र रहे हैं और अपनी शोध उपाधि उन्होंने प्रो0 देवेन्द्र शर्मा एवं यू.पी.एस.ओ. के तत्कालीन निदेशक के संयुक्त निर्देशन में प्राप्त की थी। यहां यह स्पष्ट करना उचित होगा कि भौतिकी विभाग एवं यू.पी.एस.ओ. दोनों की यह प्रबल इच्छा थी कि हमारे बीच सहयोग कार्यक्रमों को और गति प्रदान करने हेतु यह आवश्यक है कि दोनों संस्थानों में औपचारिक गठबंधन स्थापित किया जाए, जिसमें राज्य सरकार की भी सहमति एवं सहभागिता हो। अतएव सम्यक विचारोपरान्त यह निर्णय लिया गया कि गोरखपुर विश्वविद्यालय में यू.पी.एस.ओ. का एक उपकेन्द्र स्थापित किया जाए, किन्तु जिन दिनों शासन स्तर पर उपकेन्द्र स्थापित करने का अंतिम निर्णय औपचारिक एवं विधिक स्तर पर होना था, उसी समय उत्तरांचल राज्य का गठन हो गया जिससे यू.पी.एस.ओ. का प्रशासिनक नियंत्रण नवगठित उत्तरांचल राज्य को चला गया। ऐसी स्थिति में उक्त वेधशाला का उपकेन्द्र खोलने की पूरी योजना धरी रह गई।

तथ्यतः यू.पी.एस.ओ. के उत्तरांचल में चले जाने से प्रदेश में कोई ऐसी संस्था नहीं रही, जो खगोलशास्त्र के क्षेत्र में अध्ययन एवं शोध हेतु समर्पित हो, केवल गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग को छोड़कर। ध्यातव्य है कि भौतिकी विभाग के पास शैक्षणिक दक्षता एवं स्तरीय क्षमता तो विद्यमान थी किन्तु सीमित वित्तीय संसाधन तथा भौतिकी के अन्य क्षेत्रों में अध्ययन और शोध की व्यवस्था का दायित्व विभाग की अपनी सीमाएं हैं। गंभीर चिंतन एवं सम्यक विचारोपरान्त यह निश्चय किया गया कि विश्वविद्यालय के अधिनियमों तथा परिनियमों के अन्तर्गत एक संस्थान स्थापित करने हेतु राज्य सरकार के पास प्रस्ताव भेजा जाए। संयोग से जब मैंने प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री राजनाथ सिंह, से जिन्होंने स्नातकोत्तर उपाधि भौतिकी विषय में गोरखपुर विश्वविद्यालय से प्राप्त की है, खगोलभौतिकी में एक राष्ट्रीय स्तर का संस्थान प्रोफेसर शर्मा के नाम पर स्थापित करने की चर्चा की तो वे विशेष उत्साहित हुए। श्री सिंह ने न केवल उक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सहायता का आश्वासन दिया, अपितु विश्वविद्यालय आगमन पर 3 फरवरी 2001 को सार्वजनिक रूप से 'देवेन्द्र शर्मा ज्योतिर्विज्ञान अध्ययन केन्द्र' खोलने की औपचारिक घोषणा भी कर दी। केन्द्र की स्थापना हेतु विस्तृत प्रस्ताव के वैज्ञानिक पक्षों की संकल्पना एवं तकनीकी विवरणों को तीक्ष्णता प्रदान करने में प्रोफेसर राम सागर तथा प्रोफेसर एस. अनन्तकृष्णन ने अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं प्रशंसनीय योगदान किया है। प्रो0 रामसागर की चर्चा पूर्व में की जा चुकी है। प्रो0 अनन्तकृष्णन, टी.आई.एफ.आर. (T.I.F.R.) मुम्बई के रेडियो भौतिकी प्रकल्प द्वारा स्थापित राष्ट्रीय केन्द्र नेशनल सेंटर फार रेडियो एस्ट्रोफिजिक्स (NCRA) पुणे के 'जायंट मीटर रेडियो टेलिस्कोप' (GMRT) वेधशाला के निदेशक हैं।

राज्य सरकार ने हमारे प्रस्ताव को स्वीकृति प्रदान करते हुए केन्द्र स्थापना हेतु दो करोड़ तिरपन लाख रुपये के अनावर्तक एवं आवर्तक बजट में से वित्तीय वर्ष 2001–2002 के लिए शासनादेश सं0 3196/70–4/2001–4(8)/2001 दिनांक 27 नवम्बर 2001 द्वारा रुपया 50 लाख अवमुक्त कर दिया।

गोरखपुर विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग के खगोल भौतिकी प्रोग्राम से मेरा नाभि-नाल का सम्बन्ध रहा है। 1961 में मैंने गोरखपुर विश्वविद्यालय में भौतिकी विभाग में प्रवक्ता के रूप में एक शिक्षक/वैज्ञानिक की जीवन यात्रा प्रारम्भ की। मैंने अपना शोध आइंस्टीन द्वारा प्रतिपादित सापेक्षता के सिद्धान्त (General Theory of Relativity) के क्षेत्र में किया है। यहां यह इंगित करना समीचीन होगा कि उस समय ऐतिहासिक कारणों से भारतवर्ष के विश्वविद्यालयों में सापेक्षता के सामान्य सिद्धान्त को मात्र एक गणितीय सिद्धान्त मानकर इस क्षेत्र में केवल गणित विभागों में शोध तथा अध्ययन किया जाता था, जबकि यूरोप एवं अमेरिका में उक्त सिद्धान्त की मान्यता एक भौतिकी सिद्धान्त के रूप में स्थापित हो चुकी थी। गोरखपुर विश्वविद्यालय का भौतिकी विभाग देश का सम्भवतया प्रथम विभाग है, जहां सामान्य सापेक्षता सिद्धान्त को भौतिकीय सिद्धान्त के रूप में प्रतिष्ठित कर शोध एवं अध्ययन की परंपरा स्थापित हुई। विभाग में खगोल भौतिकी में पठन-पाठन प्रारम्भ होते ही प्रो० शर्मा की प्रेरणा से मैं इस कार्यक्रम से जुड़ गया था। प्रो० शर्मा के गोरखपुर विश्वविद्यालय से सेवानिवृत्त होने से एक वर्ष पूर्व 1978 में इंदौर विश्वविद्यालय के कुलपति नियुक्त हो जाने के उपरान्त मैं खगोल भौतिकी प्रयोगशाला का प्रभारी बना। इस प्रकार मुझे न केवल प्रो० शर्मा द्वारा स्थापित खगोल भौतिकी कार्यक्रम शोध परम्परा और मूल्यों तथा आदर्शों के अनुकरण का दायित्व प्राप्त हुआ, बल्कि उनके द्वारा आरोपित वृक्ष को विकसित, संवर्धित एवं सम्पुष्ट कर राष्ट्रीय पहचान प्रदान करने का सुयोग मिला। वर्ष 1997 में भौतिकी विभागाध्यक्ष के रूप में सेवा निवृत्त होने तक मैंने उक्त कार्यक्रम को संचालित किया। गोरखपुर विश्वविद्यालय के कुलपति के रूप में मेरे कार्यकाल में केन्द्र की स्थापना मेरे सपनों का मूर्तरूप लेने के समान है। विश्वविख्यात रेडियोभौतिकविद् प्रोफेसर गोविन्द स्वरूप (F.R.S.) ने इस केन्द्र का शिलान्यास 31 जनवरी 2002 को कुलाधिपति महामहिम प्रो० विष्णुकान्त शास्त्री के सानिध्य में किया।

यह केन्द्र दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय के अन्तर्गत एक स्वतंत्र संस्थान होगा। इस संस्थान के मुख्य उद्देश्य निम्नवत् हैं–

1. आकाशीय पिण्डों के वर्णपट के दृश्य तथा रेडियो क्षेत्र का अध्ययन एवं शोध राज्य वेधशाला नैनीताल, उत्तरांचल एवं नेशनल सेंटर फार रेडियोएस्ट्रोफिजिक्स पुणे के साथ सहयोगी कार्यक्रमों के अन्तर्गत करेगा।

2. गोरखपुर विश्वविद्यालय के छात्र/छात्राओं को खगोल भौतिकी में भौतिकी विभाग के सहयोग से उत्कृष्ट शिक्षा प्रदान करना।

3. खगोल भौतिकी एवं ज्योतिर्विज्ञान से सम्बन्धित ज्ञान एवं सूचनाओं का प्रचार।

4. विद्यालय एवं महाविद्यालय के छात्रों हेतु ज्योतिर्विज्ञान सम्बन्धी शैक्षिक एवं वैज्ञानिक जागृति कार्यक्रम संचालित करना।

5. खगोलभौतिकी में शोध एवं अध्ययन हेतु आर्थिक सहायता प्रदान करना।

6. खगोलभौतिकी में आवश्यक आधारभूत ढांचा स्थापित करने हेतु संस्थाओं को प्रशिक्षण एवं सहायता प्रदान करना।

7. ज्योतिर्विज्ञान के विकास एवं प्रचार के लिए समय समय पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित करना आदि।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि यह केन्द्र शिक्षण एवं वेधशाला का समेकित रूप होगा। केन्द्र को ऐसे उपकरणों एवं यंत्रों से सुसज्जित किया जाएगा, जो उक्त उद्देश्यों की पूर्ति कर सकें। उदाहरणार्थ– वर्णपट के दृश्य प्रकाश के अध्ययन के लिए एक 45 सेमी० की दूरबीन तथा रेडियो क्षेत्र के लिए 4 मीटर व्यास का डिश एण्टीना उपलब्ध होगा। इस रेडियो दूरबीन को ऊटी (तमिलनाडु) तथा पुणे में स्थापित दूरबीनों के साथ सम्बद्ध कर उच्चकोटि का शोध यथा V.L.B.I. (Very Long Base Interferometry) आदि कार्य सरलता से किये जा सकेंगे।

पूर्व कुलपति
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर

विज्ञान परिषद् के उद्देश्यों की पूर्ति में डॉ० शर्मा का योगदान

एम०पी० यादव

डॉ0 शर्मा मई 1956 से मई 1959 तक 'विज्ञान' के प्रधान सम्पादक रहे। यद्यपि उन्होंने इन तीन वर्षों में पत्रिका के लिए कोई निबन्ध नहीं लिखा किन्तु विज्ञान के प्रारम्भ में छपने वाले सम्पादकीय स्तम्भ में वे लगातार हर अंक में सामयिक विषयों पर अपने विचार प्रकट करते रहे। हमने भौतिकी के शोधछात्र श्री एम. पी. यादव से अनुरोध किया कि वे इन सम्पादकीयों का सारांश तैयार कर दें। उन्होंने बहुत ही परिश्रम से यह कार्य सम्पन्न किया है जो इस निबन्ध से स्पष्ट हो जाएगा। डा0 शर्मा ने 41 वर्ष बाद 'विज्ञान' के लिए एक लेख लिखा है। यही नहीं, उन्होंने शोध सम्बन्धी दो व्याख्यान भी दिए हैं जिनके सारांश इस निबन्ध में मिलेंगे। डॉ0 शर्मा बीच के 41 वर्षों में परिषद् से मन से जुड़े रहे हैं किन्तु प्रशासनिक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण 'विज्ञान' के लिए कुछ लिख नहीं पाए।

–सम्पादक

सम्पादक डॉ० शर्मा

मानव समाज के विकास का विज्ञान से बहुत ही गहरा सम्बन्ध है। इस तथ्य में डॉ0 शर्मा का बहुत ही गहरा विश्वास है। इस तथ्य को आपके एक लेख (विज्ञान, अंक मई जून–जुलाई सन् 1956, भाग 83) में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। "इस युग को विज्ञान का युग कहना अतिशयोक्ति न होगी। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि विज्ञान इस युग की ही देन है। यथार्थ इसके विपरीत है। वास्तव में यह युग ही विज्ञान की देन है।" डॉ0 शर्मा विज्ञान की शुरुआत को अपने नजरिए से स्पष्ट करते हुए आगे कहते हैं, "सृष्टि के प्रारम्भ से ही विज्ञान का प्रारम्भ हुआ है। हां इतना कहा जा सकता है कि सम्भवतः आजकल हम विज्ञान का अपने लिए सबसे अधिक उपयोग कर रहे हैं।" विज्ञान के जन्म के संबंध में डॉ0 शर्मा का मत ध्यान देने योग्य है "मानव की स्वाभाविक जिज्ञासा ने ही विज्ञान को जन्म दिया।" वैज्ञानिक दृष्टिकोण के संबंध में आपका मत बहुत ही संवेदनशील है, जिसकी एक झलक उनके इसी लेख में मिल सकती है "वैज्ञानिक दृष्टिकोण अधिकाधिक जानने की इच्छा एवं प्राप्त ज्ञान को तर्क द्वारा संबंधित करने पर निर्भर है। इस प्रकार मनुष्य अनादि काल से अपने ज्ञान को परिमार्जित करने और इस ज्ञान को थोड़े से मौलिक तत्वों की सहायता से व्यक्त करने में लगा हुआ है।"

धर्म में विज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण किस तरह से मिला हुआ है इसके बारे में डॉ0 शर्मा का कहना है "प्रायः धर्म सामाजिक व्यवस्थाओं को बनाता या बिगाड़ता रहा है। यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि सब

प्रायः समाज सुधारक, चिन्तक एवं दार्शनिक अपनी संकल्पनाओं को मूर्तरूप देने के लिए संस्थाओं की स्थापना किया करते हैं। आज से लगभग नौ दशक पूर्व गंगा, यमुना, सरस्वती के संगम स्थल पर कुछ ऐसे ही महान विचारकों ने (जिनमें स्वर्गीय डॉ0 गंगानाथ झा, प्रोफेसर सालिगराम भार्गव तथा प्रोफेसर रामदास गौड़ के नाम उल्लेखनीय हैं) अपनी पैनी दृष्टि से विज्ञान के भविष्य को देखा और यह अनुभव किया कि यदि हम अपने देश की उन्नति चाहते हैं, तो इसके लिए यह आवश्यक होगा कि हम अपने बच्चों को विज्ञान की शिक्षा अपनी मातृभाषा में देने की व्यवस्था करें। प्रयाग की इस पावन धरती पर स्थित विज्ञान परिषद् इन्हीं मनीषियों की कल्पनाओं का साकार रूप है।

अपनी मातृभाषा में शिक्षा देने के महत्व को आज किसी व्यक्ति को समझाने की विशेष आवश्यकता नहीं रह गई है और न ही अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्रदान करने या ग्रहण करने में विशेष कठिनाई होती है। परन्तु जिस समय विज्ञान परिषद् की स्थापना हुई थी उस समय यह बात कि विज्ञान की शिक्षा अपनी मातृभाषा के माध्यम से हो सकती है एवं होनी चाहिए तत्कालीन अधिकांश विद्वानों की कल्पना से परे थी। ऐसे समय में विज्ञान परिषद् के सम्मुख अपने कार्य को प्रगति देने में कितनी कठिनाई हुई होगी, आज के परिप्रेक्ष्य में इसका अनुमान लगाना सहज नहीं है।

विज्ञान परिषद् का आरम्भ में केवल एकमात्र उद्देश्य यह था कि हिन्दी भाषाभाषी प्रान्तों में विज्ञान की शिक्षा का कार्य हिन्दी में किया जाए। इस दिशा में जिन महान् व्यक्तियों ने परिषद् के माध्यम से इस पुण्य कार्य को समय समय पर आगे बढ़ाया एवं आज भी उसे अपनी ऊर्जा से ओतप्रोत किए हुए हैं उनमें से डॉ0 देवेन्द्र शर्मा जी आज भी अपने उसी उत्साह एवं लगन से अपना अमूल्य सहयोग एवं आशीर्वाद प्रदान कर रहे हैं। प्रस्तुत लेख में 'विज्ञान' पत्रिका एवं 'में लिखे सम्पादकीय लेखों द्वारा समय समय पर अपने ज्ञान से समाज को मार्गदर्शन देने के लिए उनके विचारों, उद्गारों को संक्षिप्त में देने का लघु प्रयास किया गया है।

–एम.पी. यादव

महान धर्मों के मूल में वैज्ञानिक दृष्टिकोण रहा है। ऋषियों एवं पैगम्बरों ने अपने समय के वातावरण को भली प्रकार देख और परख कर समाज को व्यवस्थित तथा धार्मिक तत्वों को प्रतिपादित किया है।" इसके संबंध में आगे चलकर आप अपनी निराशा भी व्यक्त करने में जरा सा भी संकोच नहीं करते। "परन्तु धर्म एवं मानवता दोनों के लिए ही दुर्भाग्य की बात है कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण का स्थान रूढ़िवाद एवं अनुदारता ने ले लिया है। फलस्वरूप कभी कभी धर्म शांति देने के स्थान पर कलह एवं अशांति का कारण बन जाता है।" अपनी व्यथा को प्रकट करते हुए आप आगे कहते हैं, "इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण मिलेंगे जब ईश्वर एवं धर्म के नाम पर अनावश्यक रक्त प्रवाह हुआ है। वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण जो ऋषियों एवं पैगम्बरों में था भुलाया जा चुका है तथा त्याग दिया गया है।" विज्ञान के बढ़ते उपयोग के बारे में चर्चा करते हुए आप कहते हैं–

"विज्ञान का समाज पर प्रभाव गर्मी में पंखे चलाने या द्रुतगामी वायुयान बनाने या रेडियो द्वारा समाचार ले जाने आदि सुगमताएं उपलब्ध कराने तक ही सीमित नहीं है। यद्यपि ये सब चीजें हमारे जीवन पर प्रभाव डालती हैं परन्तु विज्ञान की सबसे बड़ी देन है वैज्ञानिक दृष्टिकोण– प्रत्येक वस्तु को निस्पृहता से देखना, शांतिपूर्वक विचार करना और इतनी ही शांति से विचार के निष्कर्षों को मान्यता देना। इस दृष्टि से गणित विज्ञान मे सर्वोपरि है।" इससे बढ़कर वे मानवता को सचेत करते हुए आगे कहते हैं, "यह सत्य है कि वैज्ञानिक उन्नति ने अणु यंत्रों की भयानकता और संहार की वीभत्सता को निकट ला दिया है परन्तु आदि मानव ने अपने विज्ञान के आधार पर काठ या पत्थर के हथियार संहार के लिए गढ़े थे। यहां केवल परिमाप का अंतर है।" आप वैज्ञानिक दृष्टिकोण को और विस्तृत

किए जाने की आवश्यकता पर बल देते हुए आगे कहते हैं, "वैज्ञानिक दृष्टिकोण को केवल आर्थिक वस्तुओं तक सीमित नहीं रखना चाहिए। विज्ञान का मुख्य कार्य विचार शक्ति को उन्नत करना है। और किसी भी विचार से नरसंहार उचित नहीं कहा जा सकता। युद्ध समाप्त हो जाएंगे और मानवता विश्व बंधुत्व के सूत्र में बंध जाएगी।"

अक्टूबर 1957 के 'विज्ञान' के सम्पादकीय में मानवता द्विविधा के माध्यम से आपने निरस्त्रीकरण और अस्त्रों पर रोकथाम की पुरज़ोर वकालत की है "गत कई महीनों से निरस्त्रीकरण और परमाण्विक अस्त्रों पर रोकथाम की बात चल रही है। संसार के अग्रणी राष्ट्र इस विचार के समर्थन को आडम्बर कहते हैं और अधिक से अधिक विनाशकारी अस्त्रों के निर्माण और उसके उपयोग की विधियों पर अनुसंधान करते जा रहे हैं।" अस्त्रों के विनाश के संबंध में डॉ0 शर्मा का यह मत विचारणीय ही नहीं बल्कि अनुकरणीय है जिसमें वे मानव के सम्मुख दो मार्ग स्पष्ट करते हैं 1. युद्ध का सर्वथा परित्याग 2. सम्पूर्ण विनाश। इसकी विभीषिका एवं भयानकता पर वे ध्यान आकृष्ट करते हुए कहते हैं, "कुछ थोड़े से ही व्यक्ति सौभाग्यशाली होंगे जो तत्काल मृत्यु को प्राप्त हो जाएंगे। शेष सारे व्यक्तियों को अनेक प्रकार के घृणित रोगों से पीड़ित होकर तिल तिल कर मरना पड़ेगा।" आपने इसके ऋणात्मक पहलू की तरफ भी ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता पर बल दिया है। वे हमें सावधान करते हुए अपनी भावनाओं को कुछ यों व्यक्त करते हैं "4 अक्टूबर 1957 को मानव के इतिहास में एक नए युग का प्रारम्भ हुआ। मानव पृथ्वी के लिए एक नए उपग्रह को बनाने में सफल हुआ। विज्ञान की उन्नति की दृष्टि से यह शताब्दी अपना विशेष महत्व रखती है। ज्यों ज्यों वैज्ञानिक उन्नति हो रही है त्यों त्यों मनुष्य ज्ञान की सीमाएं दूर होती जा रही हैं, त्यों त्यों वह अधिक भयभीत और सहमा हुआ प्रतीत होता है। उसे डर है कि कहीं ज्ञान के कपाटों को खोलते हुए वह उस व्यक्ति की तरह अहंकारी न हो जाए जिसने अपनी तपस्या के पुरस्कार स्वरूप यह शक्ति मांगी कि जिसे वह छू ले वह सोना हो जाए.... ... संक्षेप में मानव को मानव से घृणा है। उसके हाथ में अस्त्र है। उसके पास शक्ति है और उसके पास है स्वार्थ एवं अहंकार की निर्बलता भी। स्वर्ग पाने की आशा में वह पृथ्वी से दूर खोज में जा रहा है। परन्तु कभी वह विध्वंस की ज्वाला में पड़कर नर्क में न पहुंच जाए। स्वर्ग ही संसार में सबकुछ नहीं। कोरी भौतिकता मानव को अमर नहीं कर सकती। अमरत्व के लिए चाहिए विज्ञान की आत्मा ....।"

परन्तु डॉ0 शर्मा हताश नहीं होते। वे इसी विध्वंस में शांति के मार्ग भी तलाशते हैं और इस बात का अनुभव करते हैं कि विज्ञान के इसी विध्वंस में ही शांति छिपी है। इसे ही तलाशना है। विज्ञान, सितम्बर 1957, सम्पादकीय में "जहां संसार के 70 राष्ट्र मिलकर विज्ञान द्वारा अपने पृथ्वी और अंतरिक्ष के ज्ञान को बढ़ाने में परस्पर सहयोग दे रहे हैं और इसी उद्देश्य से राकेट की सफलता से कृत्रिम चंद्रमा की सृष्टि करने जा रहे हैं वहां वे राकेटों को दूसरी दिशा में उन्नति कर रहे हैं। इन राकेटों के नाशाग्र में सुधाकर के स्थान पर घोर विध्वंसक अस्त्र जैसे परमाणु और हाइड्रोजन बम होंगे जो सहस्रों मील की दूरी पर जाकर अपने लक्ष्य पर सही सही वार कर सकें।"

"शांति स्थापित करने का मार्ग प्रीति का अनुसरण करना है। एक नादिर शाह या नैपोलियन कत्लेआम से मानवता का दमन कर सकते हैं परन्तु शांति स्थापित नहीं कर सकते हैं। शांति स्थापित करने के लिए चाहिए बुद्ध या ईसा मसीह या गांधी का सर्वतोन्मुखी और विश्वव्यापी प्रेम।

विज्ञान का प्रचार-प्रसार

विज्ञान के प्रचार प्रसार एवं आम जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाने एवं मानव जीवन को सुखमय बनाने के लिए प्रयासरत विज्ञान परिषद् के द्वारा समय समय पर आत्ममंथन करने के अवसरों के सदुपयोग की तरफ ध्यान देने की तरफ इशारा करते हुए विभिन्न महान विभूतियों द्वारा परिषद् में आगमन के अवसर पर आपके हृदय–उद्‌गारों को सहज रूप से देखा जा सकता है। "उत्तर प्रदेश सरकार के गृह, सूचना एवं शिक्षा मंत्री माननीय कमलापति त्रिपाठी ने

विज्ञान परिषद् भवन देखने के लिए आने की जो कृपा की उसके लिए हम माननीय त्रिपाठी जी के आभारी हैं। उनके आगमन से हमें बड़ा प्रोत्साहन मिला। हमने एक बार पुनः अपने कार्य की प्रगति और इसमें आने वाली कठिनाइयों पर विचार करने का अवसर पाया। हमें आशा है कि माननीय त्रिपाठी जी तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति समय समय पर हमारा उत्साह बढ़ाते रहेंगे।"

यह सही है कि विज्ञान में नित नए नए आविष्कारों ने मानव जीवन के हर पहलू को प्रभावित ही नहीं किया है बल्कि सभ्यता एवं संस्कृति में भी परिवर्तन किया है। डॉ0 शर्मा ने अपने एक अन्य सम्पादकीय लेख 'विज्ञान और सभ्यता' (विज्ञान, दिसम्बर 1957) में लिखा है "विज्ञान की उन्नति के साथ साथ सभ्यता एवं संस्कृति में भी एक नए ढंग का परिवर्तन छा रहा है। फलतः कुछ भौतिकवाद बढ़ रहा है और आध्यात्मिकता के ह्रास होने का भय है। इस परिवर्तन का कारण मानव का केवल उन वैज्ञानिक तत्वों की ओर आकृष्ट होना है जो उसे भौतिक स्थल पर अधिक रोचक प्रतीत होते हैं। यदि मानव के प्रत्येक व्यवहार में सच्चाई और बात को बारीकी से जांचने की भावना आ जाएगी तो यह संसार यथार्थता एक नई उन्नत और परिष्कृत संस्कृति और सभ्यता का निर्माण करने में सफल होगा।"

डॉ0 शर्मा बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी व्यक्ति रहे हैं। कभी वे एक वैज्ञानिक के रूप में हमारे सामने होते हैं तो दूसरे क्षण वे एक सामाजिक व्यक्तित्व के रूप में हमारे बीच दिखते हैं। वे हर क्षण मानव समाज की समस्याओं एवं उसके सम्भव निराकरण की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते हुए दिख जाते हैं। यथा 'विज्ञान' के इसी अंक में क्षय रोग और उसकी रोकथाम के अंतर्गत भारत में उन्होंने क्षय रोगियों की संख्या तथा उससे प्रतिवर्ष होने वाली मृत्यु के बारे में लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है। इसको नष्ट करने के भारत सरकार एवं संयुक्त राष्ट्र संघ के बाल आपात कोष से मिली सहायता का जिक्र किया है। इसी लेख में आपने बी.सी.जी. टीके के विभिन्न देशों द्वारा किए जा रहे प्रयोग एवं उसके आशा के अनुरूप प्राप्त परिणामों पर भी प्रकाश डाला है।

डॉ0 शर्मा को सामाजिक, राजनैतिक एवं वैज्ञानिक रूप में विश्व के मुकुट के रूप में भारत को प्रतिष्ठित रूप में देखने की उत्कंठा निरन्तर उद्वेलित करती रही है जो जनवरी 1958 के 'विज्ञान' में विशेष रूप से देखी जा सकती है। "भारत ने सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में तो संसार में अपना एक विशेष स्थान बना लिया है किन्तु शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान के क्षेत्र में वह विश्व के अग्रणी राष्ट्रों से बहुत पिछड़ा है।" उनका मन मस्तिष्क वैज्ञानिक ज्ञान के दुरुपयोग की आशंका से आंदोलित होता रहता है। वैज्ञानिक ज्ञान का इतना दुरुपयोग हुआ कि संसार में आतंक छा गया है परिणामस्वरूप कुछ लोग वैज्ञानिक प्रगति को शंकित और भयभीत होकर देखते हैं।

यह वैज्ञानिक प्रगति का युग है। जिस राष्ट्र की प्रगति रुकती है उसका अंत अवश्यम्भावी है। इसलिए गलत दिशा में विज्ञान की उन्नति को कोसने से काम नहीं चलेगा। विज्ञान का विकास अपार शक्ति का स्रोत है। इसका उपयोग हम निर्माण के हेतु करें या विनाश के साधन प्रस्तुत करने में यह हमारी मनोवृत्ति पर है। सात्विक या शुद्ध विज्ञान की प्रगति से ही काम चलाना सम्भव नहीं। उसके उपयोग के लिए कार्य करना अनिवार्य है। मानव जीवन के मूल्यों और जीवन दर्शन के सिद्धान्तों के विपरीत केवल स्वार्थ साधना के लिए विज्ञान का उपयोग विकृति का द्योतक है, अतः आज मानव हृदय की कोमल भावनाओं और वैज्ञानिक वृत्ति में संतुलन लाना पड़ेगा। वैज्ञानिकों में त्याग एवं प्रेम की भावनाओं का विकास ही संसार की उन्नति का मार्ग प्रस्तुत कर सकेगा और राजनीति से दूर रहकर ही वैज्ञानिक विश्व की सच्ची सेवा कर सकेंगे।

आपने समय समय पर देश में सरकार द्वारा मानवहित में उठाए गए बड़े बड़े प्रोजेक्टों के बारे में भी आम नागरिकों को महत्वपूर्ण एवं उपयोगी जानकारी उपलब्ध कराने की कोशिश की है। "रिहन्द योजना में बांध पर 31 करोड़ 73 लाख और बिजली के तार आदि पर 13 करोड़ 53 लाख रुपया व्यय होगा। बांध में 6 करोड़ 17 लाख घन फुट सीमेंट कंकरीट लगेगा जो

कश्मीर से कन्याकुमारी तक सड़क बनाने को पर्याप्त होगा। जितना मसाला इस योजना में लगेगा उतना विदेश के सातों पिरामिड में न लगा होगा। जल एकत्र करने वाली झील 180 वर्ग मील में फैली होगी और उसमें 86 लख एकड़ फुट जल एकत्र किया जा सकेगा।"

'विज्ञान' मार्च, 1958 में 'विज्ञान संस्कृति' के अन्तर्गत विस्तृत चर्चा करते हुए डॉ0 शर्मा कहते हैं,

"आज के समाज में सभ्यता का मापदण्ड किसी व्यक्ति विशेष के अधिकृत सुख सामग्रियों का भण्डार है। अन्य क्षेत्र में उसके ज्ञान का अभाव उसके सामाजिक स्तर पर विशेष प्रभाव नहीं डालता। इस तथ्य को सम्मुख रखकर यदि हम विचार करें तो स्पष्ट हो जाएगा कि यदि ललित कलाओं और साहित्य की अवहेलना करके भी वैज्ञानिक क्षेत्र की प्रगति चलती रही तो जो अवस्था मानव समाज की आज है वह उससे भिन्न नहीं होगी। किन्तु विज्ञान के विकास के अभाव में केवल ललित कलाओं और साहित्य की उन्नति हमें आज अनेकानेक सुविधाजनक उपकरणों से वंचित कर देती और समाज आज भौतिक उन्नति न कर सकता जितनी की वह आज कर सका है। फिर भी साहित्य एवं कला की प्रगति के महत्व को ठुकराया नहीं जा सकता।"

"प्रमुख वैज्ञानिकों को आज सत्ता की ऐसी आज्ञाओं को मानने का विरोध करना होगा जो उनसे केवल विनाश के उपकरण ही बनवाती है। उन्हें अपनी सारी शक्ति सृजनात्मक कार्यों में ही लगानी पड़ेगी। भारतवर्ष के वैज्ञानिकों की मनोवृत्ति आज इसी प्रकार की है। वे केवल मानव समाज के कल्याणकारी कार्य ही कर रहे हैं। डॉ0 एच.जे. भाभा के सभापतित्व में अन्तर्राष्ट्रीय अणुशक्ति कमीशन ऐसा ही कार्य कर रहा है। हमें इस बात का गर्व है कि इस बार का लेनिन शांति पुरस्कार भारत के एक प्रमुख वैज्ञानिक सर सी. वी. रमन को प्राप्त हुआ है।"

"इस दिशा में संयुक्त राष्ट्रीय शैक्षिक वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संघ (यूनेस्को) का कार्य भी सराहनीय है। उड़ीसा प्रदेश के श्री वी पटनायक ने इस ध्येय में अपना सहयोग देने के हेतु सन् 1952 में यूनेस्को के तत्वावधान में प्रतिवर्ष एक ऐसे व्यक्ति को कलिंग पुरस्कार देने की व्यवस्था की जिसकी सेवाएं वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में महान हों।"

मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं को प्रभावित करने वाले विभिन्न वैज्ञानिक कारणों एवं उसके सुधार को भी आम जनता के बीच लाने का श्रेय डॉ0 शर्मा को दिया जाता है। उदाहरण के लिए 'विज्ञान' पत्रिका के ही अप्रैल 1958 के सम्पादकीय 'नए बांट' में बहुत ही रोचक एवं आवश्यक जानकारी जुटाई गई है। "सभ्यता के प्रारम्भ से ही लम्बाई, क्षेत्रफल आदि के नापने की समस्या मनुष्यों के सम्मुख आई। इनके नापने के लिए विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार के माप प्रचलित हुए। लगभग 5000 वर्ष पूर्व मिस्र देश के निवासियों ने एक ही आकार के पत्थरों को बांट के रूप में प्रयुक्त करना आरम्भ किया। इस भार का नाम बाद में 'स्टोन' पड़ा जिसका भार 4 से 20 पौण्ड के बीच रहा। आज भी इंग्लैण्ड में भार को माप के रूप में काम में लाया जाता है और उसका भार 14 पौण्ड निश्चित कर दिया गया है। अमेरिका में अभी तक 'बुशल' को भार की मात्रा के रूप में प्रयोग में लाते हैं। प्रारम्भ में यह एक विशेष आयतन का द्योतक था। इस आयतन के बराबर अनाज का भार एक बुशल समझा जाता था। धीरे धीरे इन मापों में विकास होता गया और इस बात का प्रयत्न किया गया कि इन पैमानों में एकरूपता लाई जाए। साथ ही प्रणाली सरल एवं बोधगम्य हो और छोटे बड़े पैमाने सरल अंशों के हों जिससे उनका उपयोग राज्यभर में किया जा सके।"

भारतवर्ष के परिप्रेक्ष्य में नए बांटों की उपयोगिता के बारे में डॉ0 शर्मा आगे कहते हैं, "अभी भारत का उद्योग शैशव काल में है इसलिए बांटों की प्रणाली में इसी समय परिवर्तन कर देना आवश्यक हो गया है। भारत सरकार का यह प्रयत्न स्तुत्य है। हमें आशा है कि जनता के समझदार लोग इस योजना का स्वागत करेंगे और इसे अपनाने में अपना सहयोग देंगे।"

विश्व के विकसित देशों को ध्यान में रखकर परमाण्विक अस्त्रों के विकास की विभीषिका से उत्पन्न खतरों को ध्यान में रखकर परमाणु बमों के परीक्षण की

रोक की दिशा में सोवियत सरकार द्वारा विश्व के अन्य देशों के साथ की पहल पर डॉ0 शर्मा इसे शान्ति को सुदृढ़ बनाने तथा समस्त संसार की सुरक्षा को स्थिर रखने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मानते है। 'मई 1958 के अपने सम्पादकीय 'सोवियत संघ के परीक्षण पर रोक' में वे लिखते हैं "ईसा से लगभग 300 वर्ष पूर्व कलिंग युद्ध के पश्चात् सम्राट अशोक ने राष्ट्रीय नीति के साधन के रूप में युद्ध का स्वेच्छा से त्याग किया था। आज की परिस्थितियों में जब दो विश्व युद्धों और आज के चल रहे शीत युद्ध से मानवता कराह रही है, निरस्त्रीकरण की समस्या एक विशेष महत्व रखती है। सोवियत संघ ने एकपक्षीय ढंग से परमाण्विक तथा उदजन बमों के परीक्षण पर रोक का निर्णय इस दिशा में एक ठोस कदम उठाया है।"

"शून्य लोक में कृत्रिम उपग्रह प्रेषित करने के पश्चात् यह घोषणा दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है जिसने सोवियत संघ को अत्यधिक लोकप्रिय बना दिया है। रूस के इस निर्णय के उत्तर में यदि अन्य परमाण्विक शक्तियां भी इसी प्रकार ऐसे अस्त्रों का परीक्षण बंद कर दें तो शांति को सुदृढ़ बनाने तथा समस्त संसार की सुरक्षा को स्थिर रखने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण प्रयास होगा। ऐसा कदम समग्र रूप में अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों में सुधार करने की दिशा में निर्विवाद रूप से योगदान देगा और शांति के भविष्य एवं आने वाली पीढ़ियों के लिए पैदा हुई पीड़ा के भय से मानव जाति को मुक्त करने में सहायक होगा।"

अपने इसी सम्पादकीय में आगे भारत की संस्कृति, साहित्य एवं कला से अत्यधिक संबंध रखने वाले भारतीय शास्त्र के महान ज्ञाता 88 वर्षीय डॉ0 वोगल के असामयिक निधन पर श्रद्धांजलि देते हुए उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व की चर्चा करते हुए डॉ0 शर्मा लिखते हैं "प्रो0 वोगल ने डच, अंग्रेजी और फ्रांसीसी भाषाओं में भारतीय कला, इतिहास और पुरातत्व शास्त्र पर जो किताबें लिखी हैं वे उनके गहन अध्ययन का प्रमाण हैं। उन्होंने लेडन में कर्न इंस्टीट्यूट की स्थापना की। हालैण्ड में यही एक संस्था है जो भारत के प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति में शोधकार्य करती रही है। आशा है यह संस्था अपने संस्थापक के चरणचिह्नों पर चलकर आगे भी सराहनीय कार्य करेगी और भारतवर्ष में पुरातत्व विभाग से सदैव की भांति अपना संबंध रखकर अपने ध्येय की पूर्ति के हेतु प्रयत्नशील रहेगी।"

जून 1958 के सम्पादकीय में सोवियत रूस द्वारा छोड़े गए तृतीय स्पुतनिक के उपयोग की विस्तृत चर्चा करते हुए आप लिखते हैं "इस स्पुतनिक की सहायता से वायुमण्डल के ऊपरी धरातलों का अध्ययन सम्भव हो गया है। संवाद प्रेषण की उत्तम चयनात्मकता और बहुप्रणाली युक्त टेलीमानिटरिंग पद्धति के परिणामस्वरूप पृथ्वी पर स्थापित रिकार्डिंग स्टेशनों पर तथ्यों तथा आंकड़ों का संप्रेषण अधिक सरल हो सकेगा। सौर बैटरियों के समावेश के फलस्वरूप अधिक अवधि तक पर्यवेक्षण और वैज्ञानिक आंकड़ों की सुविधा भी रहेगी। तृतीय स्पुतनिक की सहायता से पृथ्वी के वायुमण्डल पर सौर विकिरण के प्रभाव के विषय में चुम्बकीय तूफानों, ध्रुवप्रभा आदि की व्याख्या के संबंध में आश्वस्तता मूलक भविष्यवाणी की जा सकेगी। ब्रह्माण्डीय यानों की सुरक्षा के हेतु उल्का पिण्डीय कणों के केन्द्रीकरण एवं उनकी शक्ति के निर्धारण की माप भी सुविधापूर्वक की जा सकेगी।"

4 जुलाई 1958 के सम्पादकीय 'भारत वर्ष में महामारी' में डॉ0 शर्मा ने मलेरिया रोग एवं उसके उन्मूलन की तरफ हमारा ध्यान खींचा है– "विश्व भर में फैला होने के कारण मलेरिया मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु कहा जा सकता है। केवल मलेरियाग्रस्त क्षेत्रों में ही भारतवर्ष की आधी जनसंख्या रहती है। अनेकों बार इस रोग ने महामारी का रूप भी धारण किया एवं जन और धन की अपार हानि उठानी पडी। पूरे संसार में इस रोग से सन् 1946 ई0 में 30 लाख व्यक्ति मरे थे।" आप इसकी रोकथाम के लिए आगे सुझाव देते हैं–

"मलेरिया उन्मूलन का कार्य सरल नहीं है। इसके हेतु अदम्य उत्साह और अटूट लगन की आवश्यकता है। वैज्ञानिक अनुसंधानों को अंत तक चालू रखना पड़ेगा। साथ ही जनता के सहयोग से ही वैज्ञानिक इस कार्य को पूर्ण कर सकेंगे। यही अवसर है कि जनता और वैज्ञानिक मिलकर मच्छरों में

प्रतिरोध शक्ति उत्पन्न करने के पूर्व ही उन्हें नष्ट करके भारत को ही नहीं अपितु सारे संसार को इस महामारी से मुक्ति दिला दें।"

विज्ञान का लोकप्रियकरण

आपने अगस्त 1958 के सम्पादकीय में विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिए कुछ सुझावों की तरफ संकेत किया है– जैसे कि देश में विज्ञान के अध्ययन की रुचि उत्पन्न करने के लिए व्याख्यानों, पुस्तकालयों, संग्रहालयों, विज्ञान क्लबों के प्रबंध एवं भारतीय भाषाओं में ऐसी प्रमाणिक पुस्तकों को निकालने पर बल दिया है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली का प्रयोग हो। सम्पादकीय के अगले क्रम में आपने विभिन्न देशों में वृक्षारोपण के अभियान एवं उसकी उपयोगिता पर व्यापक चर्चा की है "मनुष्य के जीवन में वृक्षों की बहुत उपयोगिता है। वृक्षों से हमें ईंधन, चारा, इमारती लकड़ी और फल मिलते हैं। इस प्रकार वृक्षों की कमी या बहुलता देश की आर्थिक तथा सामाजिक जीवन पर अच्छा या बुरा प्रभाव डालती है। न्यूजीलैण्ड में रेगिस्तान की प्रगति को रोकने के लिए वृक्षों के कुंज लगाने एवं सड़कों के दोनों ओर वृक्षों की पंक्तियां लगाने पर अधिक बल दिया जाता है। अमेरिका में कुंज दिवस (आर्वर डे) मनाया जाता है। स्कूलों एवं सार्वजनिक स्थलों पर किसी की स्मृति में वृक्ष लगाया जाता है। हमारे देश में वृक्षारोपण को बड़ा महत्वपूर्ण एवं पुण्य कार्य माना गया है। आठ वर्ष पूर्व भारत ने सरकारी तौर पर इस महत्वपूर्ण कार्य को 'वन महोत्सव' के रूप में प्रतिवर्ष मनाने की योजना निकाली। एक वृक्ष को काट देना सरल है किन्तु एक वृक्ष को तैयार करने में लगभग एक पीढ़ी का समय लगता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए जब तक अत्यन्त अनिवार्य न हो वृक्ष को न काटना चाहिए।"

"पेड़ लगाने से एक अपूर्व संतोष मिलता है। आगामी पीढ़ी के लिए यह एक बहुत बड़ा उपकार है। वन महोत्सव मनाते समय हमें ध्यान में रखना चाहिए कि उत्सव केवल एक दिन या एक सप्ताह की चहल पहल नहीं है अपितु यह देश के विकास का प्रमुख अंग तथा भविष्य के विश्वास का प्रतीक है।"

सितंबर 1958 के सम्पादकीय 'विकासवाद के 100 वर्ष' के अन्तर्गत डॉ0 शर्मा ने बहुत ही गूढ़ चर्चा की है। आप लिखते हैं "1859 में डार्विन की पुस्तक The origin of species के प्रकाशन से संसार भर में एक नई उथल पुथल प्रारम्भ हुई। विकासवाद (एवोल्यूशन) शब्द के प्रथम प्रयोगकर्ता डार्विन ही हैं। आपने इसी चर्चा में ग्लैडस्टोन के उस वक्तव्य को भी स्थान दिया है जिसमें डार्विन को वे न तो विकासवाद का खोजी मानते हैं और न ही इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि हमारी उत्पत्ति बंदर से हुई है। आप बताते हैं कि रोम के कवि ल्यूकैटिपस के काव्य, ग्रीस दार्शनिक एम्पीडौक्लियास आदि ने भी विकासवाद पर चर्चा की है।"

विकासवाद की चर्चा करते हुए डॉ0 शर्मा आगे कहते हैं "आज के जगत में विकासवाद को साधारण मनुष्य उसी तरह मानता है जिस तरह सूर्योदय को। डार्विन के विषय में व्यक्त किए गए पुराने विचारों का लोग अब भी उपयोग करते हैं। वह डार्विन की संज्ञा विकासवाद के खोजी से करते हैं, उसे वह मनुष्य बताते हैं जिसने कहा है कि हमारी उत्पत्ति बंदर से हुई है।"

"डार्विनवाद की नींव तीन वैज्ञानिक तथ्यों तथा उससे निकले हुए दो परिणामों पर आधारित है। डार्विन के इन विचारों की कड़ी आलोचना हुई। इन आलोचनाओं के बाद डार्विनवाद में लोगों का विश्वास टूटने लगा। अब से लगभग 30 वर्ष पहले बहुत से वैज्ञानिक यह समझने लगे थे कि प्राकृतिक निर्वाचन का विकास की क्रिया में कोई हाथ नहीं हो सकता। यहां तक कि विरोधी कहने लगे कि प्राकृतिक निर्वाचनवाद गुब्बारे की तरह फूलकर फट गया। परन्तु कुछ समय बीतने के बाद वंशानुक्रम विज्ञान की प्रगति के कारण डार्विनवदियों एवं वंशानुक्रम वैज्ञानिकों में समझौता होने लगा। अब डार्विन एवं मेण्डल दोनों के अनुयायी मान बैठे हैं कि विकास म्यूटेशन निर्वाचन और जीनों के विविध संयोगों का फल है। इस प्रकार प्राकृतिक निर्वाचनवाद अर्थात् डार्विनवाद का पुनर्जन्म हो गया है और अब विकासवादी मानते हैं कि प्राकृतिक निर्वाचन का विकास की क्रिया में बहुत बड़ा हाथ है।"

डॉ0 शर्मा सामयिक समस्याओं पर चर्चा करते रहे हैं। अक्टूबर 1958 के सम्पादकीय 'नापतौल की दाशमिक प्रणाली' के बारे में वे लिखते हैं "भौगोलिक सीमाओं की दुरूहता तथा देश के छोटे छोटे राज्यों में

विभक्त होने के कारण भारत में अनेक प्रकार की नापतौल और मुद्रा की प्रणालियां प्रचलित रहीं। अपने राज्य काल में प्रथम बार अकबर का ध्यान इन प्रणालियों की एकरूपता की ओर आकर्षित हुआ। कालावधि में परिवर्तन होते हुए अनेक प्रकार की प्रणालियां देश में चलने लगीं। इस समय देश में लगभग 150 प्रकार की नापतौल की प्रणालियां चल रही हैं। लगभग 100 प्रकार के सेर प्रचलित हैं। अनेक प्रकार के बीघे हैं जिनका क्षेत्रफल विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न भिन्न है। इन भिन्नताओं से बड़ी असुविधा होती है। बहुत से लोग ठगे जाते हैं। हिसाब किताब के लिए भांति भांति के पहाड़े रटने पड़ते हैं। व्यापार वाणिज्य में बाधा पड़ती है। उद्योग धन्धों में बेचने खरीदने में और वैज्ञानिक कार्यों में बड़ी गड़बड़ी रहती है।"

"दाशमिक प्रणाली का प्रचलन देश की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसके प्रत्येक क्षेत्र में सुविधा हो जाएगी और अनिश्चय की बाधा दूर हो जाएगी। उद्योग की प्रगति की दृष्टि से इन प्रणालियों के प्रचलन के हेतु यह समय बड़ा उपयुक्त है। अमेरिका एवं इंग्लैण्ड के व्यवसायी बहुत दिनों से दाशमिक प्रणाली अपनाने पर विचार कर रहे हैं किन्तु वे ऐसा कर पाने में असमर्थ हो गए हैं। उनके लिए दाशमिक प्रणाली अपनाने का अर्थ है करोड़ों हिसाब किताब की मशीनों को बेकार कर देना और इस हानि को उठाने की क्षमता उनमें अब नहीं रह गई है। आज जब भारतवर्ष अपने उद्योग के शैशवकाल में है उसके सम्मुख ऐसी समस्या नहीं है। इसलिए हम कह सकते हैं कि पुरानी प्रणालियों को छोड़कर नई दाशमिक प्रणाली अपनाने का सर्वोच्च समय यही है।"

भाषा

भारत को एक राष्ट्र के रूप में रहना है तो कुछ स्थूल उपादानों को सहेजे रखना इसकी अनिवार्यता है। भाषा ऐसा ही एक उपादान है। प्रगति के आधार पर, विज्ञान को जब तक अपनी भाषा का कलेवर नहीं दिया जाता भाषा स्वीकार्य नहीं हो पाएगी। विभिन्न परिवर्तनों ने आज हमें इस स्थिति में पहुंचा दिया है जहां यह सम्भव है इस सम्भावना को मूर्तरूप देने के के लिए हिन्दी में विज्ञान लेखन महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि आवश्यक है। जिस तथ्य को हम आज अनुभव कर रहे हैं और जिसके लिए आज जोरशोर से प्रयास किया जा रहा है। डॉ० शर्मा इस कार्य को अंजाम देने के लिए बहुत पहले से प्रयासरत रहे हैं। इसके समर्थन में 'विज्ञान' नवम्बर 1958 का सम्पादकीय 'वैज्ञानिक साहित्य' दृष्टव्य है। "हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक साहित्य का सूत्रपात लगभग 100 वर्ष पूर्व हुआ। इसके पूर्व भी कुछ गिनी चुनी पुस्तकें विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर उपलब्ध थीं। प्रारम्भ में वैज्ञानिक साहित्य निर्माण में ईसाइयों का सहयोग मिला। फिर कुछ व्यक्तिगत रूप से इस क्षेत्र में उतरे। इनमें पं० सुधाकर द्विवेदी, पं० लक्ष्मीशंकर मिश्र और लाला सीताराम प्रमुख हैं।"

"हिन्दी माध्यम से वैज्ञानिक शिक्षा का प्रारम्भ गुरुकुल कांगड़ी में हुआ। यहां रसायन, भौतिक शास्त्र आदि की पुस्तकें तैयार कराई गईं। किन्तु इस दिशा में ठोस काम 1915 में विज्ञान परिषद् द्वारा प्रारम्भ किया गया। विज्ञान परिषद् इस क्षेत्र में सदैव अग्रणी रहा है। परिषद् ने केवल उन्हीं पुस्तकों को प्रकाशित किया जिन्हें अन्य प्रकाशक छापने में असमर्थ थे। परिषद् ने 1915 में एक मासिक पत्र 'विज्ञान' का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया। परिषद् के अतिरिक्त अन्य प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित पुस्तकें प्रारम्भ में या तो विज्ञान के लेखकों द्वारा या विज्ञान में प्रकाशित लेखों की सामग्री के आधार पर लिखी गईं।"

"भारत सरकार और प्रान्तीय सरकार ने भी नवीन पुस्तकों के प्रकाशन तथा अन्य भाषाओं की श्रेष्ठ पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित करने की व्यवस्था की है। परिषद् के कुछ प्रमुख कार्यकर्ता सरकार की सहायता कर रहे हैं। इस राष्ट्र कार्य में देश की प्रमुख वैज्ञानिक संस्थाओं के सहयोगी की आवश्यकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दीप्रेमी उत्साहपूर्वक सहयोग की भावना से कार्य करें और उच्चकोटि के साहित्य का सृजन कर उन थोड़े से लोगों का मुंह बंद कर दें जो समझते हैं कि अंग्रेजी को छोड़कर हिन्दी माध्यम से भारत में वैज्ञानिक प्रगति संभव नहीं है।"

किसी भी राष्ट्र की प्रगति में पेट्रोलियम पदार्थों

का अति महत्वपूर्ण योगदान होता है। जब मशीनी युग अपने शैशवकाल से युवावस्था की ओर अग्रसर हो तो ऐसे में पेट्रोलियम उत्पादों की तरफ अधिकाधिक ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता होती है। आज से लगभग साढ़े चार दशक पूर्व डॉ0 शर्मा ने 'विज्ञान' के दिसम्बर 1958 के सम्पादकीय में 'भारत में पेट्रोल' शीर्षक के अंतर्गत कुछ मौलिक तथ्यों की तरफ इशारा किया है। "भारत में प्रतिवर्ष लगभग 50 लाख टन पेट्रोलियम की खपत होती है, देश का तेल का दैनिक उत्पादन 9100 बैरल प्रतिदिन है जो कि आवश्यकता का केवल 6 प्रतिशत है। अनुमान लगाया जाता है कि खपत प्रतिवर्ष 10 प्रतिशत बढ़ेगी और यदि इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु समुचित प्रबंध न हो सका तो सन् 1976 तक लगभग 5 अरब रुपये का तेल विदेशों से आयात करना होगा। विदेशी मुद्रा की कठिनाई को देखते हुए आवश्यक मात्रा में तेल एवं प्राकृतिक गैस के नवीन स्रोतों की खोज और उपलब्ध स्रोतों के विकास द्वारा इस दिशा में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना आवश्यक हो गया है।"

जनवरी 1959 के सम्पादकीय 'चन्द्रलोक के द्वार पर', के अन्तर्गत डॉ0 शर्मा रूसी वैज्ञानिकों द्वारा चन्द्रगामी राकेटों की सफलता के सफल अभियान के लिए रूसी वैज्ञानिकों को बधाई देते हुए लिखते हैं "चन्द्रलोक की यात्रा का विचार बड़ा पुरातन है। परन्तु यह हर्ष का विषय है कि हम ऐसे समय में पहुंच गए हैं जिसमें इस विचार के मुख्य वेधशाला के संचालक श्री ए.ए. मिखाइल गोर्वाचोव ने कहा— अब समय आ गया है जब मनुष्य चन्द्रमा एवं अन्य ग्रहों पर उतरेगा। चन्द्रगामी राकेटों की सफलता ने रूसी वैज्ञानिकों का सम्मान बहुत बढ़ा दिया है। प्रथम स्पुतनिक की भांति यह भी रूसी मस्तिष्क को ऊंचा करने में सफल हुआ है। यह निःसंदेह सत्य है कि इस दिशा में रूसी वैज्ञानिकों की सफलता दूसरों के लिए पथप्रदर्शक सिद्ध हुई और उन्हें संसार भर का प्रथम श्रेणी का वैज्ञानिक बना दिया। इस सफलता के लिए रूसी वैज्ञानिक हमारी बधाई के पात्र हैं।"

हिन्दी भाषा में विज्ञान का प्रचार एवं प्रसार हो इसके लिए अनवरत संघर्ष करने वाले डॉ0 शर्मा ने विभिन्न संस्थाओं द्वारा इस दिशा में किए जाने वाले कार्यों पर प्रकाश डालते हुए 'विज्ञान' फरवरी 1959 के सम्पादकीय शीर्षक 'नया कदम' के अंतर्गत बहुत ही

डॉ0 देवेन्द्र शर्मा के 'विज्ञान' में प्रकाशित लेख (संपादक बनने से पूर्व)

1.	नवीन भौतिक दृष्टिकोण	अप्रैल 1942
2.	महान अज्ञेय	जून 1947
3.	काहु न पावक जारि सक !	नवम्बर 1947
4.	विज्ञान और समाज	मई–जुलाई 1956

उपरोक्त के अतिरिक्त आपके दो लेख अनुसंधान पत्रिका में जनवरी 1998 में स्पेक्ट्रोस्कोपी की आंख से (अवनि से अन्तरिक्ष के परे तक) एवं अक्टूबर 1998 में 'दिविसूर्य सहस्रस्य' शीर्षक से प्रकाशित हैं। आपके ये दोनों लेख बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में तथा विज्ञान परिषद् प्रयाग में विभिन्न अवसरों पर दिए गए व्याख्यानों के अंश हैं। ये दोनों लेख मन को रोमांचित करने वाले हैं यथा 'तम से ज्योति में जाने की आकांक्षा स्वाभाविक है तम की सीमा है पर ज्योति की असीम है। आध्यात्मिक स्तर पर न सही सामान्य भौतिक स्तर पर ज्योति को कैसे बढ़ाया जाए, तापीय उच्छृंखलता लिए ज्योति नहीं स्निग्ध ज्योति देखें।' वस्तुतः इन दो लेखों की प्रत्येक पंक्ति इतनी गूढ़ एवं ऊर्जावान है जिसे पढ़ने से किसी भी व्यक्ति के मन में ऊर्जा का संचार होने लगता है।

– सम्पादक

गर्मजोशी से चर्चा की है। "इंडियन साइंस कांग्रेस के अवसर पर विज्ञान परिषद् इलाहाबाद के तत्वावधान में दिल्ली विश्वविद्यालय में 23 जनवरी 1959 को विज्ञान की विविध शाखाओं की एक गोष्ठी हुई। इसमें विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर हिन्दी में अनुसंधान निबंध पढ़े गए और उन पर विचार विनिमय किया गया। यह गोष्ठी भारत की वैज्ञानिक प्रगति की दृष्टि से एक ऐतिहासिक महत्व रखती है। यह पहला अवसर है जब देश के विद्वानों ने विचारों के आदान प्रदान और वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार के लिए देश की राष्ट्र भाषा हिन्दी का माध्यम अपनाया।"

अपनी मातृभाषा में विज्ञान लेखन हो, इसकी छटपटाहट जिसे आज हम सब अनुभव करते हैं डॉ0 शर्मा के अंदर उस समय भी बहुत ही अधिक एवं उग्र थी। तभी तो उन्होंने आगे चर्चा करते हुए लिखा है, "संसार के सभी प्रगतिशील देश के वैज्ञानिक ज्ञान के आदान प्रदान हेतु भाषा का ही प्रयोग करते हैं। स्नातकोत्तर शिक्षा और वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य के लिए राष्ट्र भाषा का ही उपयोग किया जाता है। अभी तक भारतवर्ष का सारा वैज्ञानिक कार्य अंग्रेजी के ही माध्यम से होता रहा है। आज से एक वर्ष पूर्व विज्ञान परिषद् इलाहाबाद ने हिन्दी में विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका नाम की एक मासिक पत्रिका प्रकाशित की। इस पत्रिका में विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर अनुसंधान लेख एवं उनके सारांश हिन्दी में प्रकाशित होंगे। परिषद् ने यह पत्रिका प्रकाशित करके भारत के वैज्ञानिकों का मार्गदर्शन किया है। उन्हें स्पष्ट बता दिया है कि वैज्ञानिक विषयों में अनुसंधान निबंध तक हिन्दी में प्रकाशित हो सकते हैं फिर वैज्ञानिक विषयों की उच्चतम शिक्षा को हिन्दी के माध्यम से देना और सरल है।" अपने इसी लेख में उन्होंने हिन्दी में कार्य करने में आने वाली बाधाओं का जिक्र करते हुए लिखा है, "अभी देश में हिन्दी के माध्यम से विश्वविद्यालय की उच्चतम कक्षाओं में शिक्षा देने के लिए उपयुक्त आचार्यों का अभाव है। परिषद् द्वारा आयोजित दिल्ली की इस गोष्ठी की भांति ही अन्य बैठकें हिन्दी द्वारा वैज्ञानिक साहित्य के प्रसार के हेतु बड़ी लाभदायक सिद्ध होंगी और अधिकांश विद्वानों के मन में घुसे हुए इस भय को बाहर निकाल फेंकेगी कि वे हिन्दी में अपने विचार प्रकट करने तें असमर्थ हैं। केवल अभ्यास की आवश्यकता है। जब अभ्यास के कारण हम एक विदेशी भाषा में सफलतापूर्वक अपने विचार दूसरों के सम्मुख रख सकते हैं तो थोड़े से परिश्रम एवं अभ्यास से हम अपनी मातृभाषा और राष्ट्रभाषा में यह कार्य अधिक सरलता और अधिक सफलतापूर्वक कर सकेंगे।"

सन् 1958 को पूरे विश्व में 'अन्तर्राष्ट्रीय भूभौतिकी वर्ष' के रूप में मनाया गया था। इसको मनाने का उद्देश्य यह था कि हम इस भूमण्डल एवं वायुमण्डल के बारे में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त कर सकें। इस संदर्भ में ऋतु विज्ञान, ब्रह्माण्ड किरणों तथा उपग्रह आदि सहित 13 विषयों के बारे में अधिकाधिक जानकारी इकट्ठी करने की कोशिश की गई थी।

इस अन्तर्राष्ट्रीय भू भौतिक वर्ष का भारत के परिप्रेक्ष्य के महत्व का विवरण देते हुए आप लिखते हैं, "भूचुम्बकीय भूमध्य रेखा दक्षिण भारत से होकर गुजरती है। इस कारण इसके बारे में भारतीय वैज्ञानिकों के नए अनुसंधान और महत्वपूर्ण हो जाते हैं। वर्तमान प्रयोगशालाओं और वेधशालाओं के अलावा भू भौतिक वर्ष सम्बन्धी भारतीय समिति ने देश के विभिन्न भागों में अनुसंधान केन्द्र स्थापित किए हैं।

"समुद्र शास्त्र के बारे में भी भारत में महत्वपूर्ण कार्य हुआ है। बीस बंदरगाहों में स्वचालित ज्वार मापक यंत्र लगाए गए और खम्भात की खाड़ी में 30 जगह ज्वार की धाराओं को नापने का काम अब भी चल रहा है। भूकम्प के बारे में भी कई स्थानों पर अध्ययन किया गया। आगरा में एक विद्युतचुम्बकीय भूकम्प मापक यंत्र लगाया गया जिसे भूभौतिक वर्ष की अवधि के लिए कोलम्बिया के विश्वविद्यालय ने दिया।"

'विज्ञान' पत्रिका के प्रधान सम्पादक के रूप में कुछ सम्पादकीय शीर्षकों जैसे अप्रैल 1959 में आपने द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत 'हिन्दी की उन्नति के लिए काम' शीर्षक के अंतर्गत किए जा रहे प्रयासों की चर्चा की है तो विज्ञान परिषद् प्रयाग में प्राप्त विज्ञान पत्रिका के अन्य (1959) सम्पादकीय में 'हानिकारक

विज्ञान साहित्य' नामक शीर्षक में आपने दोषपूर्ण साहित्य से समाज एवं देश में पड़ने वाले दुष्परिणामों की विस्तृत चर्चा की है।

दीर्घ अन्तराल के बाद डॉ0 शर्मा ने 'राष्ट्रीय विज्ञान दिवस' पर एक निबन्ध लिखा जो विज्ञान के मार्च 2002 अंक में छपा। जैसा कि डॉ0 देवेन्द्र शर्मा की प्रकृति में रहा है कि वे हमेशा ही सृजनात्मक कार्यों में रुचि लेते रहे हैं। परन्तु उनके जीवन की एवं उनकी लेखनी की गतिशीलता में निरन्तर उनके विचारों की ऊर्जा अविरल रूप से हमें मिलती चली आ रही है। विज्ञान के मार्च 2002 के इस अंक में 'राष्ट्रीय विज्ञान दिवस' शीर्षक के अन्तर्गत आपने विज्ञान दिवस की शुरुआत एवं विश्व के परिप्रेक्ष्य में अमूल्य जानकारी जनमानस को उपलब्ध कराई है। आप लिखते हैं "इस काल में ही हमारे महानायक का जन्म 7 नवम्बर 1888 को हुआ तथा इस काल खण्ड की समाप्ति के समीप 28/29 फरवरी 1928 को उसने उस शोध की घोषणा की जिसका महत्व देश काल की सीमाओं को लांघता हुआ निरन्तर बढ़ता जा रहा है। 1987 से यह 28 फरवरी का दिन अब विज्ञान दिवस के रूप में मनाया जा रहा है। यह दिवस समाज और देश के गौरव की यादगार तथा नई पीढ़ी के वैज्ञानिकों के लिए प्रेरक का स्रोत है।"

प्रोफेसर रमन के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की चर्चा करते हुए आप लिखते हैं, "भारत रत्न प्रो0 चन्द्रशेखर वेंकटरामन का व्यक्तित्व अद्वितीय था। न केवल इतनी शिक्षा पूरी तरह से अपने देश में हुई वरन् सम्पूर्ण शोधकार्य भी यहीं सम्पन्न हुआ। प्रायोगिक कार्य के लिए अपने उपकरणों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन करने या पूरी तरह से उसका निर्माण करने की उनमें क्षमता थी।"

आप प्रोफेसर रमन के जीवन की एक घटना का उल्लेख करते हुए बताते हैं, "एक बार प्रोफेसर कॉम्प्टन जब भारत आए तब अन्तरिक्ष किरणों के अध्ययन से संबंधित उनका एक उपकरण यहां समय से नहीं पहुंचा। प्रोफेसर रामन ने सामान्य उपयोग की वस्तुओं से वह उपकरण तैयार कर उसी दिन उपलब्ध करा दिया।"

आप उनके बहुमुखी व्यक्तित्व की चर्चा करते हुए लिखते हैं " उनका कार्य केवल प्रायोगिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं था। सैद्धान्तिक भौतिकी में भी उनका समान अधिकार था जिसकी पुष्टि मैक्सबोर्न के इन शब्दों से होती है "रामन की कुशाग्र बुद्धि गणित की पेचीदगी को लांघकर सीधी तथ्यों पर पहुंच जाती है। जिन लोगों ने उनके व्याख्यान सुने हैं, चाहे कक्षा में या जन सामान्य के लिए पॉपुलर, वे जानते हैं कि गूढ़ वैज्ञानिक रहस्यों को वे कैसे सुगम बना देते हैं।"

विज्ञान दिवस के अवसर पर विज्ञान पत्रिका में लिखे इस लेख में आपके विचारों की पैनी धार को देखने का अवसर मिलता है। आपके ये विचार देश काल एवं परिस्थिति से बांधे नहीं जा सकने वाले हैं। "चाहे रामन प्रभाव हो, या आइंस्टीन का सापेक्षिकता सिद्धान्त या सत्येन्द्र नाथ बसु की क्वांटम सांख्यिकी, ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं, जब शोधकार्य केवल जिज्ञासा वश किया गया है, परन्तु अन्ततः मानव ने उसका उपयोग सुख, समृद्धि और उत्थान या कभी कभी विनाश के लिए किया है। रामन की शोध यात्रा वाद्य यंत्रों के सुरीले स्वरों से प्रारम्भ होकर सागर की श्यामल धवल हिलोरों द्वारा प्रकाश के प्रकीर्णन एवं विवर्तन से होती हुई मणियों की जगमगाहट तथा फूलों के रंगों द्वारा दृष्टि विज्ञान की गुत्थियां सुलझाने तक पहुंची।"

लेख के समापन में आपने युवा पीढ़ी का आवाहन करते हुए लिखा है, "नवोदित युवक और युवतियां अनेक वैज्ञानिक मनीषियों से प्रेरणा लेकर अपने अवलोकन और जिज्ञासा को जाग्रत रखते हुए प्रकृति के यथार्थ और सत्य का साक्षात्कार करने में सफल होंगे। सुपात्र में ज्ञान का प्रादुर्भाव और प्रसार स्वयमेव होता है। अपनी इस भावना को भास्कराचार्य के शब्दों के माध्यम से व्यक्त करते हैं

जले तैलं खले गुह्यं पात्रे दानं मनागपि
प्राज्ञे शास्त्रं स्वयं याति विस्तारं वस्तु शक्तितः।

शोध छात्र भौतिकी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

डॉ० शर्मा के निर्देशन में डी.फिल. डिग्री प्राप्त शोधकर्ता

1958	एम.एम. जोशी	:	Emission and Absorption Spectra of some Diatomic Molecules.
1961	आर.सी. माहेश्वरी	:	Study of Absorption Spectra of Intermetallic Diatomic Molecules.
1963	नितिश के. सान्याल	:	Studies of some Macromolecules by Light Scattering and Allied Physical Methods.
1964	आर.एम.पी. जायसवाल	:	Spectral Studies of some Substituted Benzaldehydes.
1967	बी.आर. पाण्डेय	:	Study in the Spectra of some Polyatomic Molecules.
1967	सी.पी.डी. द्विवेदी	:	Vibrational and Electronic Spectra of some mono-and di-derivatives of Benzene.
1967	एल.एन. त्रिपाठी	:	Infrared and Electronic Absorption Spectra of di-derivatives of Benzene
1968	एस.एम. पाण्डेय	:	Spectra of Some Polyatomic Molecules.
1968	आर.ए. सिंह	:	Gravitational Radiation
1968	कैलाश चन्द्र	:	Investigation of the Spetra of some di-substituted Benzene.
1968	पी.डी. सिंह	:	Spectroscopic Studies of Simple Polyatomic and Diatomic Molecules
1968	ए.एन. पाठक	:	Spectroscopic Studies of Simple Polyatomic and Diatomic Molecules.
1969	जी.एन.आर. त्रिपाठी	:	Electronic and Vibrational Spectra of some di-substituted Benzenes.
1969	उपेन्द्र कुमार	:	Electronic and Vibrational Spectra of some substituted Anilines.
1969	एस.एल. श्रीवास्तव	:	Spectroscopic Studies of some di- and tri-substituted Benzenes
1969	वाई.पी. श्रीवास्तव	:	Studies in Molecular Spectra and Molecular Structure
1969	बी.जे. अन्सारी	:	Spectroscopic Studies of Some Substituted Benzenes
1970	वी.एन. सक्सेना	:	The absolute Quantum Efficiency of some Phosphors by Excitation in Extreme Ultraviolet Region.
1973	अमर सिंह	:	Luminescence in some Alkaline Earth Sulphide Phosphors.
1973	शशि भूषण	:	Luminescence in some Compounds of the Second Group Elements.
1974	जे.पी. चतुर्वेदी	:	Spectrophotometric Studies of Late-type stars.
1974	एम.एम. मिश्रा	:	Electro-luminescene and Thermoluminescene in Inorganic Phosphors.
1980	के. सिन्हा	:	Molecules in Solar Atmosphere
1981	आर. सागर	:	Studies in Star Clusters
1981	बी.के. द्विवेदी	:	Study of Spectra of Polyatomic Molecules.
1981	पी.सी. सरकार	:	Studies in Molecular Constants and Related Problems in Molecular Dynamics.
1983	आर.के. मिश्रा	:	Study in Luminescence in some Alkaline Earth Sulphides
1987	वीरेन्द्र प्रताप	:	Studies on the Electrical and Magnetic Properties of Rare Earth Molybdates and some of their oxides.
1988	आई.डी. जोशी	:	Studies on Electro-optical Properties of some Phosphors of II-VI Group Compounds.

Hin Lew photographed this group at tea time in the laboratory in 1950. The male of the species, from left to right : D. Sharma, J. Shoosmith, A. V. Jones, P. Frechette, A. Douglas, D. A. Ramsay, E. J. Casey, C. Reid, M. Feast, C. Pallet & J. Potter.
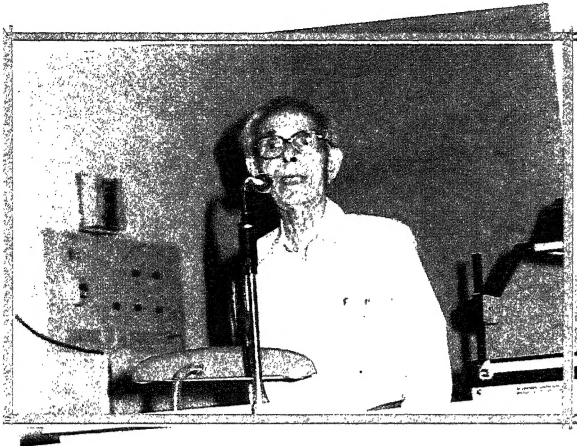
विभिन्न अवसरों पर
डा० देवेन्द्र शर्मा
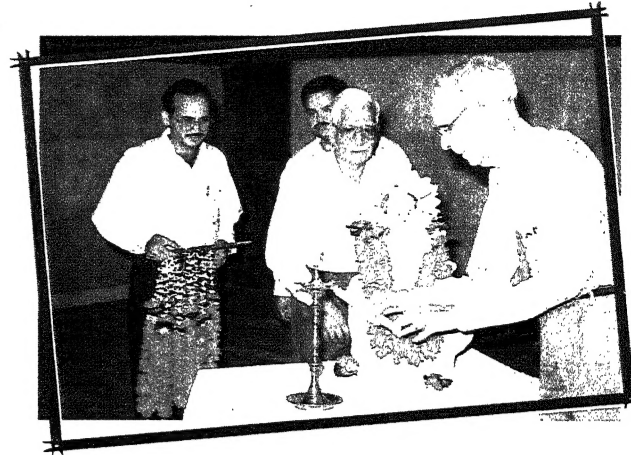
डा० शर्मा
अपनी पत्नी
श्रीमती महिमा शर्मा
के साथ

गोरखपुर विश्वविद्यालय में प्रो० देवेन्द्र शर्मा ज्योर्तिविज्ञान अध्ययन केन्द्र का शिलान्यास करते हुए उत्तर प्रदेश के राज्यपाल श्री विष्णु कान्त शास्त्री, प्रो० गोविन्द स्वरूप व अन्य